भीतर

4
बुलंदी छू सकती है यह जोड़ी!

चौथी दुनिया

दिल्ली 3 मई 2009
हिन्दी का पहला साप्ताहिक अखबार

19
आईपीएल-2 में किंग खान की बाज़ीगीरी

9
ग्रामीण मतदाताओं का अलग होगा गणित

5
अरुण जेटली का सपना

8
यूपी होगा केंद्र की सत्ता का केंद्र

मूल्य 20 रुपये

पहला ही दहला

गंगेश मिश्र

पहला आम चुनाव देश में अब तक का सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण आयोजन था. वह 1952 में हुआ था. तब से आम चुनाव के 14 दौर पूरे हो चुके हैं, लेकिन लोकतंत्र का सही लाभ समाज के अंतिम आदमी तक आज भी नहीं पहुंचा है. उपलब्धि के नाम पर 1977 के बाद से मतपेटियों के जरिए सात सरकारें बदलीं जरूर, लेकिन बहुसंख्य होते हुए भी ग्रामीण मतदाता हर चुनाव के बाद हाशिए पर ही रहा. नतीज़े के रूप में पंद्रहवीं लोकसभा के लिए चल रहे मतदान के पहले चरण में बड़े पैमाने पर हुई नक्सली हिंसा सामने है. छत्तीसगढ़, उड़ीसा, झारखंड और बिहार या यूं कहें कि देश भर में आदिवासियों-दलितों का पेट भर पाने में चुन कर बनने वाली सरकारें अब तक नाकाम ही रही हैं. चुनाव आयोग बुरा न माने, लेकिन सच्चाई यही है कि भूखे पेट वाला नागरिक पप्पू ही है. वह वाकई वोट नहीं डालता. और इंटरनेशनल फूड पॉलिसी इंस्टीट्यूट के आंकड़े बताते हैं कि 2008 में 88 देशों के वैश्विक भूख सूचकांक में भारत 66वें स्थान पर था. इतना ही नहीं, देश के 17 बड़े राज्यों में से चार में भूख का स्तर गंभीर (सीरियस) किस्म का था, जबकि 12 में चेतावनी वाला (अलार्मिंग) और एक राज्य में बेहद गंभीर स्थिति थी. संयोग देखिए कि पहले दौर में 16 अप्रैल को पंद्रहवीं लोकसभा की जिन 124 सीटों के लिए वोट पड़े, वे भी 17 राज्यों में ही थीं.

पहले चरण में 15 राज्यों और दो केंद्र शासित प्रदेशों में लगभग 60 प्रतिशत वोट पड़े. जिन 124 सीटों पर वोट पड़े हैं, उनमें से अधिकतर पर संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (यूपीए) के अलावा तीसरे और चौथे मोर्चे का कब्ज़ा था. पिछले चुनाव में इन 124 में से 30 सीटें जहां कांग्रेस के पास थीं, वहीं तीसरे मोर्चे के पास 35, चौथे मोर्चे के पास 15 तो भाजपा-एनडीए के पास 36 सीटें थीं. आठ सीटें अन्य के पास थीं. चुनाव आयोग के आंकड़े कहते हैं कि इस बार आंध्र प्रदेश में 65 प्रतिशत वोट पड़े, जबकि बिहार में 46, अंडमान निकोबार व अरुणाचल प्रदेश में 62-62, महाराष्ट्र में 54, उड़ीसा में 53, उत्तर प्रदेश में 48, छत्तीसगढ़ में 51, झारखंड में 50, नगालैंड में 84 और जम्मू-कश्मीर में 48 प्रतिशत वोट पड़े. उड़ीसा और आंध्र प्रदेश में लोकसभा के साथ-साथ विधानसभाओं के लिए भी मतदान हुए. उड़ीसा में लोकसभा की 21 व विधानसभा की कुल 147 में से 70 सीटों और आंध्रप्रदेश में लोकसभा की 22 व विधानसभा की 154 सीटों के लिए वोट पड़े.

वैसे पिछले चुनाव की तुलना में बिहार और उड़ीसा में 12 से 13 प्रतिशत वोट कम पड़े. इसके लिए मौसम और परिसीमन से अधिक मतदाताओं के मिजाज़ का विश्लेषण करना चाहिए. 2004 की तरह इस बार भी किसी राष्ट्रीय दल के लिए न तो कोई मुद्दा है और न ही कोई लहर देखने को मिल रही. फिर भी इस बार का आम चुनाव पिछली बार से कई मायनों में अलग है. इस बार मुद्दा न तो सरकार की सफलता या विफलता है, न ही कारगिल या बोफोर्स. न आतंकवाद या नक्सलवाद है न महंगाई या रामसेतु. इसीलिए किसी एक राष्ट्रीय मुद्दे या नेता के नाम पर वोट के बजाय राज्य स्तरीय विषयों, क्षेत्रीय समस्याओं और स्थानीय नेताओं के नाम व उनकी अच्छी-बुरी छवि को देखकर ही वोट पड़ रहे हैं.

ताश के पत्तों की तरह बनते-बिगड़ते समीकरणों के बीच पहले दौर के मतदान ने खींच दी है आख़िरी नतीजे की रूपरेखा.

सबसे हैरतनाक संकेत पूर्वी उत्तरप्रदेश के हैं. पिछले विधानसभा चुनाव में जो ब्राह्मण मतदाता मायावती के साथ चले गए थे, वे पलट गए हैं. मुस्लिम वोट बंटने और ब्राह्मणों के फिर से भगवा ब्रिगेड से जुड़ जाने से भाजपा को नया जीवन मिल सकता है. ग़ौरतलब है कि पिछले लोकसभा चुनाव में पूर्वी उत्तरप्रदेश में भाजपा को सिर्फ दो सीटें मिली थीं. वे थीं-गोरखपुर और महाराजगंज. इस बार पहले दौर में राज्य में जिन 16 सीटों के चुनाव हुए हैं,उनमें गोरखपुर व महाराजगंज के अलावा आजमगढ़, लालगंज (सु.) देवरिया, वाराणसी, बांसगांव (सु.). चंदौली, मछलीशहर और बलिया भी हैं. गोरखपुर में भाजपा के योगी आदित्यनाथ तिकोने मुकाबले में फंस गए हैं. उन्हें सपा प्रत्याशी और भोजपुरी गायक मनोज तिवारी ने नहीं, बल्कि बाहुबली नेता हरिशंकर तिवारी के पुत्र और बसपा प्रत्याशी विनय शंकर तिवारी ने असली टक्कर दी है. दोनों के पक्ष में ब्राह्मण और ठाकुर वोटों का ध्रुवीकरण हो गया.

चुनावी विश्लेषकों ने मुसलमानों की पार्टी-उलेमा काउंसिल- को अब तक बहुत हल्के में ले रखा है. हक़ीकत यह है कि वह इतिहास रचने जा रही है. उसने भारत के लोकतांत्रिक इतिहास में नया क़ारनामा कर दिखाया है. उसने मुस्लिमों-दलितों का नया गठबंधन बना लिया है. लालगंज (सु.) इसका गवाह बनेगा. यहां उलेमा कौंसिल की अपील पर लगभग 90 फीसदी मुस्लिम वोट पड़े हैं. उलेमा काउंसिल इस तरह माई (मुस्लिम-यादव) की राजनीति कर अपनी-अपनी राजनीतिक रोटियां सेंकती रही पार्टियों को सबक सिखाने जा रही है. वैसे आश्चर्यजनक रूप से पूर्वी उत्तरप्रदेश में कांग्रेस का पुनरुद्धार होता भी साफ नज़र आया. अकेले चुनाव लड़ने का निर्णय देर-सबेर उसे निश्चय ही भरपूर लाभ देगा. फिलहाल, मुस्लिम वोट बांटने के कारण वह धर्मनिरपेक्ष ताकतों के गणित को गड़बड़ कर रही है.

मतदान : तब और अब

राज्य	2004	2009
लक्षद्वीप	81	86
नगालैंड	91	84
मणिपुर	78	67
आंध्र प्रदेश	68	65
मेघालय	53	65
असम	69	62
अरुणाचल प्रदेश	56	62
अंडमान	64	62
केरल	71	71
महाराष्ट्र	59	54
उड़ीसा	64	53
मिजोरम	63	52
छत्तीसगढ़	52	51
झारखंड	54	50
उत्तरप्रदेश	48	49
जम्मू-कश्मीर	44	48
बिहार	58	46
कुल	60	58-62

आंकड़े प्रतिशत में. पहले दौर में 124 सीटों पर पड़े वोट

फोटो-*पंकज नागिया*

उत्तरप्रदेश में परिसीमन भी चुनाव परिणामों को प्रभावित करेगा. कैसे, इसे प्रतापगढ़ की सीट से समझा जा सकता है. प्रतापगढ़ में आने वाले विधानसभा क्षेत्रों में दो हैं-कुंडा और बिहार. कुंडा से राजा भैया जीतते हैं तो बिहार से उनका एक नज़दीकी. राजा भैया इस क्षेत्र में सपा की ताक़त हैं. लेकिन परिसीमन के बाद ये दोनों विधानसभा क्षेत्र प्रतापगढ़ से बाहर हो गए हैं. इससे जातिगत समेत सारे समीकरण ध्वस्त हो गए हैं. ऐसे में अपना दल के समर्थन से बतौर निर्दलीय चुनाव लड़ रहे अतीक़ अहमद अचानक अच्छी स्थिति में आ गए हैं. परिसीमन का ऐसा खेल प्रदेश में कई संसदीय क्षेत्रों में हुआ है.

रही बात बिहार की, तो धर्मनिरपेक्ष खेमे में पड़ी फूट ने जनता दल (यू)-भाजपा का पलड़ा भारी कर दिया है. ऊपर से मुख्यमंत्री नीतीश कुमार का अतिपिछड़ा और अतिदलित कार्ड भी कम गुल नहीं खिला रहा है. सवर्ण वोट बिहार में सत्तारूढ़ गठबंधन के पक्ष में पहले से ही जा चुका है. राज्य में पहले दौर में जिन 13 सीटों के लिए वोट पड़े हैं, उनमें से कम से कम आधी सीटों के परिणाम पिछली बार से अलग हो सकते हैं. 2004 में इन 13 सीटों में से सात लालू प्रसाद के राष्ट्रीय जनता दल (राजद), दो कांग्रेस और तीन भाजपा-जद (यू) के खाते में गई थीं. परिसीमन के बाद जमुई नया लोकसभा क्षेत्र बन गया है, इसलिए पिछले चुनाव के सिलसिले में इसकी गिनती नहीं होती.

बिहार में पहले दौर के मतदान के संकेत पुराने संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (यूपीए) के अनुकूल नहीं माने जा सकते. इन क्षेत्रों में सबसे ज़्यादा चुनौती का सामना राजद को करना पड़ा है. इस बार सारण में राजद सुप्रीमो लालू प्रसाद ख़ुद संकट में हैं. यहां माई (मुस्लिम-यादव गठबंधन) में से एम यानी मुसलमानों का अबकी उन्हें ख़ास समर्थन नहीं मिलने की ख़बरें आ रही हैं. इसलिए कि यहां तिकोना मुकाबला हुआ.

लालू को यहां भाजपा के राजीव प्रताप रूडी के अलावा बसपा के स्थानीय व मजबूत प्रत्याशी सलीम परवेज़ से कड़ा संघर्ष करना पड़ा है. चुनावी धांधली की शिकायत करते लालू ख़ुद भी मानते हैं कि इस बार टक्कर ज़ोरदार रही है. उनके लिए राहत की बात यही है कि वह जिस दूसरी सीट-पाटलिपुत्र-से चुनाव लड़ रहे हैं, वहां उन्हें लगभग वाकओवर मिला हुआ है. जद-यू ने वहां लालू के पुराने सहयोगी रंजन यादव को उतारा है, जो मुक़ाबले में कहीं नज़र नहीं आ रहे. पहले चरण के चुनाव में जद-यू को महाराजगंज में नुकसान होना तय है. प्रभुनाथ सिंह वहां तिकोने मुक़ाबले में बुरी तरह घिर गए हैं.

वैसे इस बार सीवान में दिलचस्प मुक़ाबला देखने को मिला. अदालत ने जब वहां के निवर्तमान सांसद व राजद के बाहुबली नेता शहाबुद्दीन को चुनाव लड़ने से रोक दिया तो उन्होंने पत्नी हिना शहाब को चुनावी मैदान में उतार दिया. उनके पक्ष में वोट डालने उमड़ा मुस्लिम महिलाओं का सैलाब काफी कुछ कह गया. वहां मुद्दा राष्ट्रीय तो छोड़िए, लालू प्रसाद भी नहीं थे. मतदान साफ-साफ शहाबुद्दीन के नाम पर हुआ. पक्ष में भी विरोध में भी. मुस्लिम मतदाताओं का उनके पक्ष में गोलबंद होना सांप्रदायिक धुव्रीकरण का कारण बन गया. इससे बतौर निर्दलीय चुनाव लड़ रहे ओमप्रकाश यादव की स्थिति अचानक मज़बूत हो गई है. वह जद-यू से बग़ावत कर चुनाव मैदान में उतरे हैं. स्थानीय स्तर पर पार्टी कार्यकर्ता पहले से ही आधिकारिक प्रत्याशी वृषणि पटेल के बजाय उनके साथ चल रहे थे. वोटों के ध्रुवीकरण के बाद ग़ैरमुस्लिमों के वोट पटेल के बजाय ओमप्रकाश यादव को थोक के भाव मिले हैं. इससे सीवान का परिणाम चौंकाने वाला हो सकता है. कांग्रेस प्रत्याशी और केंद्रीय मंत्री मीरा कुमार के लिए सासाराम सीट निकालना बहुत कठिन लग रहा है.

भाजपा-जद (यू) गठबंधन झारखंड में भी प्रतिद्वंद्वियों पर भारी दिखा. यहां पहले चरण में छह सीटों पर मतदान हुआ. 2004 में भाजपा इनमें से एक सीट ही जीत सकी थी. लेकिन इस बार झारखंड मुक्ति मोर्चा और उसके नेता शिबू सोरेन को लेकर चल रहा नाटक कांग्रेस जैसे उनके मित्र दलों के लिए नुक़सानदेह साबित होने जा रहा है. यूपीए के घटक दलों के बिखरने का लाभ भाजपा को स्वत: ही मिल रहा है. वैसे कोडरमा में झारखंड विकास पार्टी के प्रत्याशी और राज्य के पहले मुख्यमंत्री बाबूलाल मरांडी की स्थिति मज़बूत दिखी. हालांकि उनकी जीत भी अंतत: एनडीए के खाते में ही जाएगी.

लालू को यहां भाजपा के राजीव प्रताप रूडी के अलावा बसपा के स्थानीय व मजबूत प्रत्याशी सलीम परवेज से कड़ा संघर्ष करना पड़ा है. चुनावी धांधली की शिकायत करते लालू खुद भी मानते हैं कि इस बार टक्कर जोरदार रही है. उनके लिए राहत की बात यही है कि वह जिस दूसरी सीट-पाटलिपुत्र-से चुनाव लड़ रहे हैं, वहां उन्हें लगभग वाकओवर मिला हुआ है.

अन्य राज्यों में यूपीए के घटक दलों के बीच वोट बंटने से जिस तरह लाभ भाजपा की अगुआई वाले एनडीए को मिलता दिख रहा है, वैसे ही उड़ीसा में भाजपा और बीजू जनता दल (बीजद) के वोट बंटने से राज्य में विपक्ष काफी खुश है. वैसे केंद्रपारा जैसे तटीय क्षेत्रों में मुख्यमंत्री नवीन पटनायक की दो रुपये किलो चावल वाली चाल रंग दिखाती लग रही है.

(शेष पृष्ठ 2 पर)

दिल्ली के बाबू

दिलीप चेरियन

द ग्रेट इंडियन प्रसार भारती शो

राष्ट्रीय सार्वजनिक प्रसारक प्रसार भारती की अंदरूनी हलचल अब भी ख़बरों में है. अक्सर विवादों में रहने वाले प्रसार भारती के मुख्य कार्यकारी अधिकारी बीएस लाली, जो सीवीसी और संसदीय समिति के द्वारा तथाकथित वित्तीय अनियमितताओं के लिए दोषी करार दिए गए हैं, अब एक नए विवाद में हैं. जनवरी में हुई एक बोर्ड मीटिंग के ब्योरे बाहर आने से लाली मुसीबत में फंस गए हैं. मीटिंग में बोर्ड ने लाली की कार्यकारी शक्तियां ख़त्म कर देने का फैसला किया था. इसके आधार पर अब यूनियन नेता और कर्मचारी लाली के निलंबन और जांच की मांग कर रहे हैं.

हालांकि लाली साहब का कहना है कि यह कोई आम नहीं ख़ास बैठक थी. दूसरे, बैठक के ब्योरे भी तोड़-मरोड़ कर पेश किए जा रहे हैं. इसलिए इस पर टिप्पणी नहीं हो सकती. लेकिन सूत्रों की मानें तो प्रसार भारती अधिनियम में ख़ास बैठकों के लिए कोई प्रावधान नहीं है. हर बैठक अध्यक्ष बुलाता है और मुख्य कार्यकारी उसके एजेंडे में फेरबदल नहीं कर सकता.

कहा जा रहा है कि इस हलचल का अंत अब होने वाला है. प्रसार भारती के अध्यक्ष और पूर्व विदेश सचिव अरुण भटनागर ने इस मुद्दे पर बात करने के लिए बैठक बुलाई है. उधर, लाली साहब की एक और मुसीबत सामने आ गई है. दिल्ली महिला आयोग ने उनपर लगे यौन उत्पीड़न के आरोप पर सुनवाई शुरू कर दी है. अब कहते हैं कि न कि मुसीबत अकेले नहीं आती. लाली साहब यह बात ज़रूर समझ रहे होंगे.

चुनाव से डरे बाबू लोग

चुनावी समय का मतलब अक्सर बाबुओं के लिए चुनावी ड्यूटी होता है. हालांकि कुछ ऐसे भी हैं, जो ख़ुद मैदान में हैं. उधर हरियाणा में जैसे-जैसे चुनावी माहौल गर्मा रहा है, सरकार एक अज़ीब क़िस्म की परेशानी में फंसती जा रही है.

सरकार ने जिन बाबुओं को चुनावी ज़िम्मेदारी थमाई है, वे इस ज़िम्मेदारी से दूर भागते फिर रहे हैं. सूत्रों की मानें, तो तो सरकारी दफ़्तर उन बाबुओं के आवेदनों से भरे पड़े हैं जो पारिवारिक परिस्थितिओं के बहाने चुनावी ड्यूटी से छुट्टी पाने की जुगत में लगे हैं. चुनाव आयोग ने 28 बाबुओं को चुना है और इनमें से करीब 10 ने चुनाव से छुट्टी की गुहार लगा दी है. हालांकि ड्यूटी के लिए बाबुओं की कमी नहीं है, लेकिन सरकार के पास समय की कमी है. अब चुनाव आयोग आख़िरी सूची तैयार कर रहा है, लेकिन अगर यही हाल रहा तो उसमें बदलाव तो होगा ही.

साउथ ब्लॉक

अंजुम ए ज़ैदी

मंत्रालय से विदा हुए जितेश

असम कैडर के 1979 बैच के आईएएस अधिकारी जितेश खोसला को इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ कॉरपोरेट अफेयर्स में विशेष कार्याधिकारी के पद पर नियुक्त किया गया है. आख़िरकार कंपनी मामलों के मंत्रालय ने उन्हें बाहर का रास्ता दिखा ही दिया है. इस विभाग में वह संयुक्त सचिव के पद पर कार्यरत थे. उनका कार्यकाल विवादों से भरा रहा था. अपने कार्यकाल के दौरान हुए सॉफ्टवेयर सीडी कांड में भी उनका नाम उछाला गया था. वैसे उनका कार्यकाल इसी वर्ष 20 फरवरी को समाप्त होना था, पर कंपनी मामलों के मंत्री के साथ काफी अच्छे संबंध होने के

कारण उन्हें तीन महीने का विस्तार मिल गया था. उनके बाद संभवत: संयुक्त सचिव का पद 1987 बैच के उत्तर प्रदेश कैडर की आईएएस अधिकारी रेणुका कुमार को दिया जाएगा.

कौन जाए कनाडा

कनाडा के मांट्रियल स्थित काउंसिल ऑफ इंटरनेशनल सिविल एविएशन ऑर्गेनाजेशन में भारत की ओर से प्रतिनिधि कौन होगा इसका फैसला नहीं हो पाया है. डा. सईद नसीम अहमद ज़ैदी के जाने बाद से यह पद रिक्त हो गया था जिसपर अगले दो वर्षों तक के लिए 1985 बैच के आईएएस अधिकारी राजेश कुमार सिंह के नाम पर विचार किया जा रहा था.

राजेश कुमार सिंह इस समय नागरिक उड्डयन मंत्रालय में संयुक्त सचिव पद का कार्यभार संभाले हुए हैं. लेकिन किन्हीं कारणों से उनका नाम रोक लिया गया है और सरकार इस पद के लिए जल्द ही

विज्ञापन निकालने वाली है.

सामाजिक और बाल सुरक्षा हुई चौकस

उत्तर प्रदेश कैडर के भारतीय विदेश सेवा में निदेशक के पद पर कार्य कर रहे एके सिंह को श्रमिक मंत्रालय के अंतर्गत ईएसआई अस्पतालों के सेंट्रल विजिलेंस ऑफिसर के पद पर नियुक्त किया गया है. उधर, राष्ट्रीय बाल अधिकार सुरक्षा आयोग (एनसीआरएससी) के सदस्य सचिव के पद पर मध्य प्रदेश कैडर के 1984 बैच के भारतीय प्रशासनिक सेवा की अधिकारी रश्मि शुक्ला शर्मा को नियुक्त किया गया है.

इससे पहले इस पद पर 1973 बैच के सीएसएस अधिकारी वी.सी. तिवारी कार्यरत थे.

सनातन संत-सूफी यात्रा ने अलख जगाई पूरे देश में

देश में इस बार आम चुनाव बेहद अहम समय पर हो रहा है. यह चुनाव देश की दशा और दिशा तय करेगा. सांप्रदायिक ताक़तें एक बार फिर अपना सर उठा रही हैं. यही ताकतें देश के माहौल में ज़हर घोलने की तैयारी कर रही हैं. ज़ाहिर है कि यह समय संकट का है और देश की जनता को सावधान रहने की ज़रूरत है. सनातन धर्म के मायने क्या हैं. इसका मतलब है, सहिष्णुता, त्याग और दूसरों के कल्याण की कामना. ऐसे दुविधा और संशय से भरे समय में इसी मक़सद को लेकर अयोध्या और देश भर के साधुओं, संतों, धर्माचार्यों और सूफ़ी दरवेशों ने पूरे देश में घूम-घूम कर शांति का संदेश दिया. आठ अप्रैल को नई दिल्ली के प्रेस क्लब में एक प्रेस कांफ्रेंस कर इन सभी सूफ़ी-संतों ने अपनी यात्रा की शुरुआत की. इनकी यात्रा पूरे 15 दिन चली और कुल मिलाकर इन संतों ने 14 शहरों की यात्रा की. बिहार में पटना, झारखंड में रांची, मध्य प्रदेश में भोपाल, आंध्र प्रदेश में हैदराबाद, उत्तर प्रदेश में बनारस, लखनऊ, अयोध्या और इलाहाबाद, तो गुजरात में अहमदाबाद, कर्नाटक में बेंगलुरु, असम में गुवाहाटी और राजस्थान में जयपुर जाकर इन संतों ने सहिष्णुता और भाईचारे का संदेश दिया. पंद्रह दिनों तक चलनेवाली इस अमन यात्रा में लोगों ने भी बढ़-चढ़कर संतों का साथ दिया. सभी शहरों में बेहतरीन समर्थन मिला. संत पूरे देश को यही संदेश देना चाहते थे कि इस वक्त आपसी भाईचारे और अमन की सबसे अधिक ज़रूरत है. जो भी सनातन धर्म या इस्लाम की ग़लत व्याख्या कर इस देश

सनातन धर्म का सीधा सा मतलब है, सबका कल्याण, सर्वत्र बंधुत्व और सभी जगह खुशहाली. सूफी परंपरा हिंदुस्तान की गंगा-जमनी तहज़ीब का सबसे बड़ा उदाहरण है.

के सांप्रदायिक सौहार्द को बिगाड़ना चाहते हैं, वह बिल्कुल ही ग़लत हैं. त्याग, सहिष्णुता, बंधुत्व और वसुधैव कुटुंबकम के दर्शन वाले इस देश में कुछ शैतान अगर अपने मंसूबे पूरे भी करना चाहें तो उसे पूरा नहीं होने दिया जा सकता.

सनातन धर्म कहता है-सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामया-वह नहीं कहता, हिंदू या सनातनी भवन्तु सुखिनः, सनातन धर्म कहता है, वसुधैव कुटुंबकम् -वह नहीं कहता कि सनातनाः सन्ति कुटुंबकम्- तो, सनातन धर्म का सीधा सा मतलब है, सबका कल्याण, सर्वत्र बंधुत्व और सभी जगह खुशहाली. सूफी परंपरा हिंदुस्तान की गंगा-जमनी तहज़ीब का सबसे बड़ा उदाहरण है. सूफीवाद का बड़ा आसान सा मतलब है कि आप खुदा के साथ रहें. इसी तहज़ीब और परंपरा को सबतक पहुंचाने के लिए ये संत अयोध्या के श्री जनमेजय शरणजी और अजमेर के सूफ़ी मो. जिलानी कत्ताल के नेतृत्व में देशभर की यात्रा को निकले हैं.

संतों का कहना है कि वह एक साथ इसलिए निकले थे कि कभी-कभार दुष्ट और शैतानी शक्तियां इकट्ठा हो जाती हैं, और उनका एक साथ मिलना भले लोगों के लिए दिक्कत का सबब हो जाता है. ये अपने आश्रमों और ख़ानक़ाहों से इसलिए निकले हैं कि एक साथ होकर इन बुरी ताक़तों का मुक़ाबला कर सकें. हमारा देश, हमारा मुल्क अगर बचा है, तो इसी गंगा-जमनी तहज़ीब की वजह से. संतों और सूफ़ियों का कहना है कि वे इस देश के उन सभी सनातन धर्मियों (हिंदुओं) को आवाज़ देने निकले हैं, जो अमनपसंद हैं, जो अपने पड़ोसियों की तरक्की देखना चाहते हैं, जो मार-कटाई से नफ़रत करते हैं, जो सुख-दुख में अपने हमवतन दोस्तों के काम आना चाहते हैं, उनके होठों पर मुस्कान लाना चाहते हैं. संत और सूफ़ी जानते हैं कि इस देश का हरेक हिंदू अमनपसंद है, बस कुछ शैतानी ताक़तें हैं जो उनको बहकाकर अपना काम करना चाहती हैं. यही बात इस देश के मुसलमानों या बाक़ी अक़लियत के साथ भी है. आम इंसान या मज़हब को माननेवाला, ख़ुदा से डरनेवाला इंसान अमनपसंद ही होता है. वह कभी भी दूसरों का घर नहीं जलाना चाहता, क्योंकि उसे पता है कि आख़िर में उसे भी ज़वाबदेह होना पड़ेगा. संतों ने अपनी इसी अपील को लेकर पूरे देश में रखा और जनता से अपनी ज़वाबदेही समझने और ढंग के उम्मीदवार चुनने की अपील की. ख़ास बात यह रही कि वे किसी ख़ास पार्टी के लिए वोट डालने की अपील नहीं कर रहे थे, बल्कि दलगत भेदभाव से ऊपर उठकर बेहतर उम्मीदवारों को जिताने के लिए जनता से अपील कर रहे थे, ताकि देश में एक बेहतर सरकार बन सके.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

पहला ही दहला

(पेज 1 का शेष)

छत्तीसगढ़ में लोकसभा की कुल 11 सीटें हैं और इन सभी के लिए मतदान पहले चरण में ही हो गया. 2004 में कांग्रेस यहां सिर्फ एक सीट जीत पाई थी. इस बार वह सीट भी बची रह जाए, तो काफी होगा. छत्तीसगढ़ में सलवा जुडूम से लेकर नक्सलियों का लाख शोर होने के बावजूद मुख्यमंत्री रमन सिंह का काम भाजपा के काम आ रहा है. छत्तीसगढ़ की तरह केरल में भी लोकसभा की सभी 20 सीटों के लिए मतदान संपन्न हो गया.

पिछली बार तमाम अनुमानों को झुठलाते हुए वाम मोर्चे ने यहां 18 सीटें जीत ली थीं. इस बार उसे अगर दस भी सीटें मिल गईं,तो हैरानी होगी. आपसी लड़ाई और शीर्ष नेताओं की अनुशासनहीनता के कारण माकपा की अगुआई वाले वाम मोर्चे की हार तो मतदान से पहले ही मानी जा चुकी है. कांग्रेस की अगुआई वाले विपक्षी गठबंधन का बाज़ी मार ले जाना तय है. वैसे माकपा को प्रोग्रेसिव डेमोक्रेटिक पार्टी (पीडीपी) के विवादास्पद नेता अब्दुल नज़र मदनी की दोस्ती भी महंगी पड़ी है.

महाराष्ट्र में पहले चरण में जिन 13 सीटों पर मतदान हुआ, वे सभी विदर्भ और मराठवाड़ा क्षेत्रों की थीं. पिछले चुनाव में भाजपा ने विदर्भ की 11 में से 10 सीटें जीती थीं, लेकिन इस बार पासा पलट सकता है.

कांग्रेस-राकांपा गठजोड़ निश्चय ही बेहतर स्थित में नजर आ रहा है. इसलिए कि कांग्रेस ने परिसीमन से बदले जातिगत समीकरणों को ध्यान में रखकर प्रत्याशी उतारे हैं. वरना कर्ज़ माफ़ी के बाद भी किसानों की नाराज़गी कांग्रेस से कम नहीं हुई है.

जैसा कि सब जानते हैं कि 2004 में कांग्रेस के सबसे बड़े दल के रूप में उभरने के पीछे आंध्र प्रदेश का बड़ा हाथ था. तब कांग्रेस का टीआरएस और वाम दलों से गठबंधन था. इस गठबंधन ने 42 में से 36 सीटें जीती थीं.इनमें से 29 सीटें कांग्रेस को मिली थीं. इस बार हालात थोड़े अलग हैं. टीआरएस और वाम दल चंद्रबाबू नायडू के तेलुगु देशम पार्टी (टीडीपी) के साथ हैं. लिहाजा तेलंगाना और तटीय इलाक़ों में कांग्रेस के लिए दिक्कत पैदा हो गई है.

पहले चरण में प्रदेश की 22 सीटों पर मतदान हुआ. ये सभी तटीय आंध्र प्रदेश और तेलंगाना क्षेत्र की ही हैं. यहां चुनाव परिणामों को पृथक तेलंगाना राज्य के लिए जनादेश के रूप में ही लिया जाएगा. तमाम अटकलों के विपरीत इन इलाक़ों में दो चीजें देखने को नहीं मिलीं. एक तो अभिनेता चिरंजीवी की प्रजा राज्यम पार्टी का ख़ास असर और दूसरे, सांप्रदायिक ध्रुवीकरण. वैसे चिरंजीवी कांग्रेस का वोट इतना ज़रूर काट रहे हैं, जिससे राज्य में परिणाम काफी प्रभावित होंगे.

बहरहाल, पहले दौर के मतदान से कांग्रेस, भाजपा और तीसरे-चौथे मोर्चे के गणित गड्डमड्ड होने के संकेत मिल रहे हैं. यानी केंद्र में सरकार बनाने के लिए ज़रूरी 272 सीटों के आंकड़े के करीब कौन आ पाता है, यह अगले चरणों में होने वाले चुनाव ही तय करेंगे.

चौथी दुनिया

हिन्दी का पहला साप्ताहिक अख़बार

आर एन आई रजि.न.45843/86

वर्ष 23 अंक 7, 3 मई 2009

प्रधान संपादक

संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के - 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनाट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय

के-2, गैनन
चौधरी बिल्डिंग
कनाट प्लेस
नई दिल्ली 110001

फोन न.

संपादकीय +91 011 47149999
विज्ञापन +91 011 47149916
प्रसार +91 011 47149905
फैक्स न. +91 011 47149906

ठेंगे का लोकतंत्र

एकलव्य

अगर तुमने अंगूठा देने से इनकार किया होता
तो इतिहास काफी बदल सकता था
पर तुमने अंगूठा दे दिया
और साथ में इतिहास भी
उनका हो गया
एकलव्य, उस दिन से इन्होंने
एक बार भी पीछे मुड़कर तुम्हें देखा तक नहीं
मुझे माफ कर दो, एकलव्य, मैं अब
इनके मीठे शब्दों के
धोखे में नहीं आऊंगा
मेरा अंगूठा
कभी नहीं तोड़ा जा सकता है.

–शशिकांत हिंगोनेकर, *मराठी दलित कवि*

शाहनवाज़ आलम

लोकतंत्र के 15वें महायज्ञ में एकलव्य का अंगूठा एक बार तब फिर छल से बलि चढ़ गया, जब राबट्र्सगंज संसदीय सीट से 13 आदिवासियों का पर्चा उनके अंगूठा छाप होने के जुर्म में ख़ारिज़ कर दिया गया. लेकिन चूंकि द्वापर और कलयुग के बीच भागीरथी में बहुत पानी बह चुका है, इसलिए इस बार वे द्रोणाचार्यों के भ्रामक तर्कों में आने के बजाय इसके ख़िलाफ़ खुल कर मैदान में आ गए हैं. दरअसल इस आदिवासी–दलित बहुल सीट पर अंगूठा छाप होने के बहाने लंबे समय से लोगों के लोकतांत्रिक अधिकारों का हनन शासकवर्गीय राजनैतिक दल और इसकी राज्य मशीनरी करती आ रही है. इस बार भी जब सपा और बसपा के विरोध में छोटी पार्टियों और आज़ाद उम्मीदवारों ने चुनाव के माध्यम से अपनी आवाज़ बुलंद करनी चाही, तो इसी हथियार का इस्तेमाल करते हुए उनको चुनाव लड़ने के अयोग्य घोषित कर दिया गया. पर्चा ख़ारिज़ करने के तर्क कितने हास्यास्पद और हद दर्ज़े तक पक्षपातपूर्ण थे, इसका अंदाज़ा इसी से लगाया जा सकता है कि नामांकन के समय सहायक निर्वाचन अधिकारी ने उनके अंगूठा निशान पर कोई आपत्ति नहीं की, लेकिन बाद में अचानक इसे यह कहते हुए ख़ारिज़ कर दिया गया कि अंगूठा निशान देने वाले प्रत्याशियों और प्रस्तावकों को किसी सक्षम अधिकारी से सत्यापित कराना अनिवार्य है. वहीं ज़िला निर्वाचन अधिकारी की भूमिका अदा कर रहे ज़िलाधिकारी पंधारी यादव से जब इस बाबत अयोग्य घोषित किए गए प्रत्याशियों ने बात की, तो उन्होंने कहा कि उन्हें अंगूठा सत्यापित कराने वाले इस नए नियम की जानकारी नहीं थी. इस स्वीकारोक्ति के बाद होना तो यह चाहिए था कि ज़िलाधिकारी के विरुद्ध कार्रवाई हो, पर उल्टे कार्रवाई प्रत्याशियों का नामांकन ख़ारिज़ करने की हुई.

इस सीट से दलित–आदिवासी प्रत्याशियों का पर्चा जानबूझकर ख़ारिज़ करने की तस्दीक इस तथ्य से भी होती है कि राबट्र्सगंज से सटे मिर्जापुर लोकसभा सीट पर भी अंगूठा छाप प्रत्याशियों ने नामांकन किया है. लेकिन उनके पर्चे खारिज नहीं किए गए. जबकि दूसरी ओर चंदौली लोकसभा सीट से दलितों और आदिवासियों को गोलबंद कर रहे भाकपा–माले के प्रत्याशी श्याम बिहारी सिंह का पर्चा इस आधार पर ख़ारिज़ कर दिया गया कि 1974 में उनके ख़िलाफ़ निचली अदालत ने एक मामले में उम्रक़ैद की सज़ा सुनाई थी, जिसे बाद में हाईकोर्ट ने पलट दिया था. लेकिन निर्वाचन अधिकारी ने हास्यास्पद तरीक़े से निचली अदालत के फ़ैसले को हाई कोर्ट के फैसले पर तरज़ीह दी और जब बहसा–बहसी हुई तो निर्वाचन अधिकारी ने तीन घंटे के भीतर प्रत्याशी से हाई कोर्ट के फैसले की मूल कॉपी लाने का तुगलक़ी फरमान सुना दिया. जबकि प्रत्याशी ने पर्चा दाख़िल करते समय दोनों फैसलों का ज़िक्र किया था.

दरअसल राबट्र्सगंज सीट से अंगूठा छाप दलितों का नामांकन ख़ारिज़ होना उस मानसिकता का नतीज़ा है, जो मानता है कि दलित और आदिवासियों को उनके जल–जंगल–ज़मीन से बेदख़ल कर उन्हें औने–पौने दामों पर राष्ट्रीय और बहुराष्ट्रीय निगमों को बेच देना ही विकास का पैमाना है. इसके लिए यह ज़रूरी है कि चुनाव जैसे मौक़ों पर भी किसी बहाने उनके सवालों को उठाने वालों को अयोग्य घोषित कर पूरे चुनाव को शासक वर्गीय पार्टियों के इर्द–गिर्द ही सीमित कर दिया जाए. इस छेत्र में लंबे समय से आदिवासियों और दलितों के बीच जल–जंगल–ज़मीन के सवाल पर गोलबंदी कर रहे भाकपा (माले) के नेता और प्रत्याशी जीतेंद्र कोल, जिनका पर्चा भी इस आधार पर ख़ारिज़ कर दिया गया कि उनके दो महिला प्रस्तावक अंगूठा छाप थीं, कहते हैं– 'दरअसल यह पूरी क़वायद इस क्षेत्र में ग़रीब आदिवासियों और दलितों के जुझारू नेताओं को नक्सली बताकर किए जाने वाले फ़र्ज़ी एनकाउंटरों का ही चुनावी रूप है. जहां ऐसी आवाज़ों का नेतृत्व करने वालों को जानबूझ कर अयोग्य घोषित कर उनके लोकतांत्रिक अधिकारों का ही एनकाउंटर किया जा रहा है.'

बहरहाल, सत्ता तंत्र की इस शातिराना हरक़त से आक्रोशित दलित और आदिवासी समाज अब खुलकर इसके ख़िलाफ़ विरोध प्रकट करने लगा है. भाकपा–माले के नेतृत्व में अंगूठा छाप होने के चलते अपने चुने जाने के मौलिक अधिकार से वंचित लोग गांव–गांव जाकर चुनाव बहिष्कार की अपील के साथ चुनाव में रचनात्मक विकल्प पेश करते हुए 'अंगूठा निशान ही हमारा वोट है–लोकतंत्र के हत्यारों पर चोट है, अंगूठा लगाओ–लोकतंत्र बचाओ' के नारे के साथ समानांतर चुनाव आंदोलन चला रहे हैं. इसके तहत लगभग साढ़े तीन सौ गांवों में बूथ लगाकर लोगों से सरकार के इस जनविरोधी रवैए के ख़िलाफ़ अंगूठा लगवाकर जनमत संग्रह कराया जा रहा है. दुद्धी विधानसभा क्षेत्र, जिसे सरकार इस क्षेत्र के सबसे ज्यादा नक्सल गतिविधियों का क्षेत्र मानती है, के बघाड़ू गांव के प्रदीप कोल समानांतर वोट बूथ पर अंगूठा लगाने के बाद व्यवस्था पर एक मौजू सवाल उठाते हुए कहते हैं, 'जब सरकार हमसे अपनी किसी भी परियोजना के नाम पर अंगूठा लगाकर जमीन छीन सकती है तो फिर अंगूठा छाप होने की वजह से चुनाव लड़ने से क्यों रोका जा रहा है? वहीं समानांतर बूथ संचालित कर रहे छात्र संगठन आइसा के प्रदेश सचिव और इलाहाबाद विश्वविद्यालय के छात्र नेता रामायन राम समानांतर बूथ पर उमड़ रही भीड़ की तरफ इशारा करते हुए इसे ग़रीब जनता द्वारा लोकतांत्रिक मूल्यों को बचाने की क़वायद बताते हैं, जिस पर सत्ता तंत्र निरंतर हमले कर रहा है.

दुद्धी विधानसभा क्षेत्र, जिसे सरकार इस क्षेत्र के सबसे ज़्यादा नक्सल गतिविधियों का क्षेत्र मानती है, के बघाड़ू गांव के प्रदीप कोल समानांतर वोट बूथ पर अंगूठा लगाने के बाद व्यवस्था पर एक मौजू सवाल उठाते हुए कहते हैं कि जब सरकार हमसे अपनी किसी भी परियोजना के नाम पर अंगूठा लगाकर ज़मीन छीन सकती है तो फिर अंगूठा छाप होने की वज़ह से चुनाव लड़ने से क्यों रोका जा रहा है?

वहीं दूसरी ओर, आदिवासियों और दलितों के इस अप्रत्याशित पहलकदमी से प्रशासनिक अमले के हाथ–पांव फूल गए हैं और वो किसी भी तरह इसे रोकने पर इतारू हो गया है. इसके तहत पुलिस गांव–गांव में देर रात तक इस अभियान में शामिल नेताओं और कार्यकर्ताओं के घर छापा मारकर उन्हें डराने–धमकाने के साथ ही फ़र्ज़ी मामलों में गिरफ्तार भी कर रही है. इस बौखलाहट का अंदाज़ा इससे भी लग जाता है कि उसने भाकपा–माले के कार्यालय पर बिना सर्च वारंट के छापेमारी की और उसके कई वरिख़ नेताओं को उठा ले गई. हालांकि उन्हें बाद में जनदबाव के चलते छोड़ना पड़ा.

दरअसल प्रशासनिक अमले की इस बौखलाहट की वज़ह समझना मुश्किल नहीं है. इस सीट पर बसपा सांसद लालचंद कोल के संसद में घूसकांड में पकड़े जाने के बाद हुए उप चुनाव में बसपा प्रत्याशी भाईलाल कोल सिर्फ तीन सौ वोटों से जीते थे. इसलिए इस बार मायावती कोई रिस्क नहीं लेना चाहती थीं. वहीं दलितों और आदिवासियों में सरकारों की उपेक्षा और उनके जल–जंगल–जमीन से उखाड़ने की सरकारी नीतियों के ख़िलाफ़ वाम जनवादी पार्टियों का विस्तार तेज़ी से हुआ है. जो राष्ट्रीय रोजगार गारंटी अधनियिम (नरेगा) की आड़ में पनप रहे भ्रष्टाचार और भुखमरी के सवालों के साथ ही यहां के आदिवासियों की इस सीट को आदिवासी बहुल होने के चलते सुरक्षित करने की मांग को लगातार उठाते रहे हैं. सुरक्षित सीट का सवाल तो ऐसा है जिस पर आदिवासी सपा और बसपा दोनों ही पार्टियों द्वारा लंबे समय से ठगे महसूस करते हैं. भाकपा–माले व अन्य वामपंथी पार्टियों द्वारा ऐसे ही मूलभूत सवालों को उठाने के चलते आदिवासियों और दलितों का एक निर्णायक तबका मुख्यधारा की पार्टियों के ख़िलाफ़ संगठित हो रहा है.

इसे शासन तंत्र बौखलाहट में किसी भी हद तक जाकर रोकने में लगा है. इसकी तस्दीक इससे ही हो जाती है कि कई पुलिस अधिकारी आदिवासियों को यह धमकी देते फिर रहे हैं कि अगर माले का झंडा ढोना नहीं छोड़े तो नक्सली बनाकर एनकाउंटर कर देंगे. एक दारोगा नत्थू यादव के खिलाफ तो ग्रामीणों ने भाकपा–माले के बजाय सप या बसपा को वोट करने की धमकी देने पर जिलाधिकारी से शिकायत भी की है. दरअसल सपा और बसपा की सिर्फ पिछड़े और दलित केंद्रित संकीर्ण राजनीति के चलते यहां के आदिवासी लंबे समय से 'न घर के न घाट के' की स्थिति में पिस रहे हैं. उत्तराखंड के निर्माण के बाद राजनाथ सरकार ने कहा था कि अनुसूचित जनजाति के जो लोग थे, वे चले गए. आदिवासियों के असंतोष को देखते हुए 2003 की मुलायम सरकार ने गोड़, खरवार, चेरो, बैगा, पनिका, भुइया को अनुसूचित जनजाति का दर्जा दे दिया. जबकि कोल, मुसहर, बियार, धांगर, धरिकार, घसिया जनजाति आरक्षण की व्यवस्था से वंचित रह गईं.

अब चूंकि यह सीट सुरक्षित हो गई है, इसलिए ये जनजातियां चुनाव लड़ने के अयोग्य हैं. इसी तरह कोल, मुसहर, बियार, धांगर, धरिकार और घसिया जाति के लोग मूलत: हैं तो आदिवासी लेकिन उन्हें अनुसूचित जाति की श्रेणी में ही रखा गया है. इसके ख़िलाफ़ उनमें काफी असंतोष है. उनकी मांग है कि उन्हें भी जनजाति का दर्ज़ा देकर इस सीट को आदिवासियों के लिए सुरक्षित कर दिया जाए. यह ऐसी मांग है जिसे सपा–बसपा समेत मुख्यधारा की पार्टियां नहीं मानना चाहती. इसलिए कि आदिवासियों में वामपंथी दलों की घुसपैठ ज़्यादा है. इससे यह सीट उनके हाथ से निकल सकती है. जातीय समीकरण की यह विडंबना तो कई जगह हास्यास्पद रूप में देखी जा सकती है.

मसलन दुद्धी तहसील में ऐसी कई ग्राम सभाएं हैं, जहां सिर्फ एक या दो परिवार ही दलित हैं. लेकिन इसके सुरक्षित होने के चलते वे ही सरपंच से लेकर बीडीसी तक बनते हैं. इससे आदिवासियों में काफी असंतोष है, जो कई बार पहले भी प्रकट हुआ है. 2005 में हुए ग्राम पचायत चुनावों में भी आदिवासियों ने तकनीक़ी तौर पर चुनाव लड़ने से अयोग्य माने जाने के ख़िलाफ़ चुनावों में समानांतर बूथ लगाकर अपना विरोध दर्ज़ कराया था. लेकिन तत्कालीन सपा सरकार ने इस पर कोई पहल नहीं की. हालांकि अगर प्रदेश सरकार चाहे तो विशेष प्रावधान के तहत आदिवासियों की यह मांग पूरी कर सकती है.

बहरहाल अब यह देखना दिलचस्प होगा कि एकलव्य के वारिसों का अंगूठा अपने लोकतांत्रिक अधिकारों को इस युग में सुरक्षित रख पाता है या नहीं, इतिहास की दिशा बदल पाता है या नहीं.

समानान्तर चुनाव आन्दोलन, राबर्ट्सगंज लोक सभा क्षेत्र

'अंगूठा निशान ही हमारा वोट है- लोकतंत्र के हत्यारों पर चोट है।'

क्रम सं०	अंगूठा निशान	नाम	गाँव/मोहल्ला
1		चन्दन सोनकर	दीप नगर, राबर्ट्सगंज
2		विनोद कुमार	तकिया
3		राजकुमार	तकिया
4		विक्रमा यादव	सहदेइया
5		[illegible] भारती	पकरी, राबर्ट्सगंज
6		प्रीतम सिंह	[illegible]
7		मेंहदीहसन	[illegible]
8		मो० अकबर	पकरी
9		राम प्रसाद [illegible]	[illegible]
10		नूरजहां बेगम	बहुआरा

अंगूठा निशान लगाओ-लोकतंत्र बचाओ अभियान

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी)

समानान्तर चुनाव आन्दोलन के लिये, भाकपा (माले) सोनभद्र जिला कमेटी की ओर से जारी

सम्पर्कः भाकपा (माले) जिला कार्यालय, दीपनगर पोखरा, राबर्ट्सगंज बाजार, मो0 9935498587

बुलंदी छू सकती है यह जोड़ी!

क्या प्रकाश करात और सीताराम येचुरी की जोड़ी माकपा को फिर से उसी ऊंचाई पर पहुंचा पाएगी? यह संशय भले ही आम जनों के मन में बना हो पर करात और येचुरी की जोड़ी को यह भरोसा है कि 15वीं लोकसभा में उनकी पार्टी की ताक़त इतनी होगी कि वे राष्ट्रीय राजनीति में अहम भूमिका निभा सकें.वे कहते हैं कि आज के राजनीतिक हालात 1996 सरीखे हैं. और तीसरा मोर्चा अभी सबसे मज़बूत स्थिति में है.

रूबी अरुण

भारतीय राजनीति के उफ़क पर जगमगाते सितारे. तथाकथित तौर पर राजनीति इन्हीं की धुरी पर घूमती है. ये नाम हैं–प्रकाश करात और सीताराम येचुरी. मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी के मौजूदा स्तंभ. हमराज़ और हमक़दम भी. एक की हां में ही दूसरे की भी सहमति के स्वर.एक की नाराज़गी में ही दूसरे का आक्रोश. किसी मुद्दे पर कोई अनबन नहीं.अगर है तो यक़ीन और ग़हरी राज़दारी. देश के मौज़ूदा तीसरे मोर्चे के ख़ैरख्वाह भी यही. प्रकाश की पैदाइश बर्मा के रंगून में हुई तो सीताराम की हैदराबाद में. अवस्था में चार साल का फासला और राजनीति में आमद भी इतने ही फर्क़ से. 1973 में जब ये जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय में पढ़ा करते थे तभी से दोस्ती इनकी रगों में बह रही है.

यह जोड़ी आने वाले दिनों में क्या गुल खिलाएगी–यह सवाल हिंदुस्तानी सियासत के दरो–दीवार पर चस्पा है.ख़ासकर ज्योति बसु और हरकिशन सिंह सुरजीत की पोलित ब्यूरो के सदस्य के पद से विदाई के बाद से. तवारीख़ गवाह है कि 1962 में सीपीएम महासचिव ईएम नंबूदरीपाद और अध्यक्ष एस ए डांगे तथा ज्योति बसु और हरकिशन सिंह सुरजीत की जोड़ी ने सीपीएम को बुलंदियों तक पहुंचाया.पश्चिम बंगाल,केरल और त्रिपुरा में सीपीएम सबसे ज़्यादा असरदार पार्टी के रूप में उभरी.

वक़्त की चालों ने अपना रंग दिखाया और धीरे–धीरे पार्टी की धार कुंद होती चली गई. जबकि पार्टी का एजेंडा यह था कि उसे एक दिन इस देश पर राज करना है. आज यह ख्वाहिश एक बार फिर पार्टी पर नशा बन कर हावी है. यह अलग बात है कि उसे माकूल सफलता हाथ नहीं लग रही है. सीपीएम देश में एक वैकल्पिक सरकार बनाना चाहती है, जो गैर कांग्रेसी और गैर भाजपाई हो. वैसे तो प्रकाश करात खम ठोक कर यह कहते हैं कि उनकी पार्टी किसी क़ीमत पर कांग्रेस का समर्थन नहीं कर सकती.पर वे यह कहने से भी नहीं चूकते कि ज़रूरत पड़ने पर कांग्रेस का समर्थन लेने में उन्हें कोई परेशानी नहीं होगी. माकपा महासचिव प्रकाश करात कहते हैं कि इस बार उनकी पार्टी कांग्रेस को हटाने के नारे के साथ चुनावी मैदान में है. 2004 में सीपीएम ने धर्मनिरपेक्ष सरकार का नारा दिया था और भाजपा को हर हाल में हटाने की ठानी थी.इन्हें उम्मीद है कि तीसरा मोर्चा देश की जनता के लिए सांप्रदायिक ताक़तों के ख़िलाफ धर्मनिरपेक्षता की लड़ाई के लिए खड़ा रहेगा. क्या प्रकाश और सीताराम की जोड़ी पार्टी को फिर से उसी ऊंचाई पर पहुंचा पाएगी? यह संशय भले ही आम जनों के मन में बना हो पर प्रकाश करात और सीताराम येचुरी की जोड़ी को यह भरोसा है कि 15वीं लोकसभा में उनकी पार्टी की ताक़त इतनी होगी कि वे राष्ट्रीय राजनीति में अहम भूमिका निभा सकें. वे कहते हैं कि आज के राजनीतिक हालात 1996 सरीखे हैं. और तीसरा मोर्चा अभी सबसे मज़बूत स्थिति में हैं. हालांकि प्रकाश करात और सीताराम येचुरी फिलहाल इस मसले पर खामोश हैं कि तीसरे मोर्चे की सरकार बनने की स्थिति में प्रधानमंत्री कौन बनेगा. दोनों कहते हैं कि तीसरे मोर्चे में शामिल सभी दलों की आम सहमति से पसंदीदा उम्मीदवार चुना जाएगा. यह बात अलग़ है कि प्रकाश करात खुद प्रधानमंत्री पद की दौड़ में हैं. उनकी इस छुपी ख्वाहिश पर सवाल भी उठ रहे हैं, क्योंकि ये वही प्रकाश करात हैं जिन्होंने एक वक़्त माकपा के वरिष्ठ नेता ज्योति बसु को प्रधानमंत्री बनने से रोका था.प्रकाश कहते हैं कि यह उस समय की मांग थी.पार्टी की केंद्रीय समिति ने हालात का जायज़ा लेने के बाद यह फैसला लिया था. और यह कोई आख़िरी फैसला नहीं था. मौकों के हिसाब से हमेशा फैसले बदले जा सकते हैं. वामदलों पर यह आरोप भी लगता रहा है कि वे जानबूझ कर सरकार में शामिल इसलिए नहीं होते क्योंकि वे बिना किसी ज़िम्मेदारी के सत्ता का सुख भोगना चाहते हैं.वरिष्ठ पोलित ब्यूरो सदस्य सीताराम येचुरी इस बात से हालांकि इंकार करते हैं.कहते हैं कि वाम दलों की यही खासियत है कि वे बिना सत्ता के ज़िम्मेदारी निभाते हैं. येचुरी का दावा है कि देश की जनता कांग्रेस और भाजपा की नीतियों से त्रस्त है लिहाज़ा इस बार चुनाव में ज़बरदस्त ध्रुवीकरण देखने को मिलेगा.

प्रकाश करात का कहना है कि यूपीए और एनडीए दोनों ने ही अमीरों के हितों को ध्यान में रखकर नीतियां बनाई जिससे देश के अंदर अमीर और ग़रीब के बीच की खाई बढी है.यूपीए की सरकार देश में खाद्यान्न संकट खत्म करने और महंगाई रोकने में विफल रही है. इसलिए सीपीएम की प्राथमिकता ही यही होगी कि वह सबसे पहले खाद्यान्न सुरक्षा सुनिश्चित करे. जिन राज्यों में वामदलों की सरकार रही है वहां उसने ऐसा किया भी है.पश्चिम बंगाल में उसके लंबे समय से सत्ता में बने रहने की कई वज़हें हैं. पार्टी ने तीन स्तर वाली पंचायत प्रणाली के ज़रिए सत्ता का ज़बरदस्त विकेंद्रीकरण किया. ग्रामीण इलाकों में विकास परियोजनाओं की निगरानी और धन खर्च के तमाम अधिकार पंचायतों को सौंप दिए गए. विकास में आम लोगों की भागीदारी बढ़ाकर सीपीएम ने एक ओर तो अपनी सांगठनिक ताक़त काफ़ी मज़बूत कर ली. इससे जो एक सबसे बड़ा फायदा हुआ वो ये कि सत्ता विरोधी लहर नहीं फैल सकी.नतीज़ा ये कि गांवों का भरपूर विकास हुआ और गांवों में बुनियादी सुविधाएं मुहैय्या हैं.इसके अलावा भूमि सुधार के क्षेत्र में भी बहुत काम हुआ. सरकार ने लाखों भूमिहीन किसानों को सरकारी ज़मीनों के पट्टे दिए. यह अलग बात है कि विरोधी दल कहते हैं कि भूमि सुधार के नाम पर वाम सरकार ने बंगाल की जनता को ठगा ही है. ज्योति बसु के बाद मुख्यमंत्री बने बुद्धदेव भट्टाचार्य ने डू इट नाउ का नारा दिया. राज्य में विदेशी निवेशकों के आने का सिलसिला शुरू हुआ.

सबसे बड़ी बात है दूर–दराज़ के गांवों तक फैला पार्टी का संगठन. सांगठनिक तौर पर सीपीएम की बराबरी करना शायद भाजपा जैसी कैडर बेस्ड पार्टी के अलावा किसी भी दल के लिए मुमकिन नहीं है. मोर्चे में विभिन्न मुद्दों पर मतभेद होते रहते हैं ,लेकिन इन मतभेदों का फायदा कभी भी विरोधी पार्टी नहीं उठा पाते.क्योंकि सभी घटक उन मतभेदों को मिल बैठ कर सुलझा लेते हैं. जहां तक तीसरे मोर्चे में शामिल घटक दलों की बात है,तो सभी पार्टियां आर्थिक नीतियों,परमाणु करार और संघीय ढांचे को लेकर एकमत हैं. सवाल यह है कि सीताराम और येचुरी की जोड़ी क्या नंबूदरीपाद और डांगे की सफलता को दुहरा पाएंगे. असल घमासान तो चुनाव के बाद होना है, जब तीसरा और चौथा मोर्चा भी सरकार नहीं बना सकेगा और कहीं न कहीं वाम दलों की ज़रूरत आने वाली सरकार को पड़ेगी ही. वैसे समय में सीताराम और करात की जोड़ी ज़रूर कोई गुल खिलाएगी.

वक़्त की चालों ने अपना रंग दिखाया और धीरे–धीरे पार्टी की धार कुंद होती चली गई. जबकि पार्टी का एजेंडा यह था कि उसे एक दिन इस देश पर राज करना है. आज यह ख्वाहिश एक बार फिर पार्टी पर नशा बन कर हावी है. यह अलग बात है कि उसे माकूल सफलता हाथ नहीं लग रही है.

ruby.chauthiduniya@gmail.com

एम जे अकबर

एक दिन नेता के मौन रहने की कल्पना कीजिए

क्या यह असामान्य बात नहीं है कि दुनिया में सबसे अधिक हिंदू आबादी वाला देश हिंदुओं के एक उल्लेखनीय पर्व से अंजान है? जबकि दुनिया का सबसे अधिक मुस्लिम आबादी वाले देश इंडोनेशिया के हिंदू बहुल प्रांत बाली के मौनव्रत वाले त्योहार–राया न्येपी ताहुन बारू–पर राष्ट्रीय अवकाश घोषित किया गया. इस अनूठे देश में हिंदू–मुस्लिम तहज़ीब के अद्भुत संगम की यह ख़ूबसूरत अवधारणा है.

हम हिंदुस्तानी छुट्टियों के ख़िलाफ़ नहीं हैं, पर मौन के ख़िलाफ़ ज़रूर हैं. चूंकि हिंदू धर्म भारत से इंडोनेशिया गया था,इसलिए न्येपी की अवधारणा भी इसी रास्ते से वहां पहुंची.लेकिन मौन की अवधारणा अपनी जन्मस्थली में ही राह से भटक गई.

आधुनिक भारत के निर्माता राष्ट्रपिता महात्मा गांधी भी सप्ताह में एक दिन मौन रहते थे. वह हर सोमवार को मौन रखते थे.अगर कोई बैठक भी होती, तब भी यह सिलसिला नहीं टूटता था. यहां तक कि वायसराय के साथ भी अगर सोमवार को बैठक होती थी, तो वह अपने सवाल–जवाब एक क़ागज़ की पर्ची पर लिख कर दे देते थे. तत्कालीन अधिकारियों के लिए यह खासा संतोषजनक अनुभव रहता होगा. इसलिए कि उस दौर का ब्रिटिश अभिजात्य वर्ग इस तरह के अनूठेपन को ख़ासे सम्मान की नज़र से देखता था. कई लोगों का मानना है कि सोमवार को गांधी जी के मौनव्रत के एकाधिक कारण रहे होंगे. सबसे बड़ा तो यही कि भारत में सार्वजनिक जीवन जीने वालों के वाणीतंत्र पर काफी दबाव रहा करता है. लोग उम्मीद लगाए रहते हैं कि ऐसा व्यक्ति जब भी कुछ बोले,तो काफी बुद्धिमत्तापूर्ण हो.

गांधी जी के लिए इस मौन की एक और उपयोगिता रही होगी. बापू का अपनी अंतरात्मा से बड़ी ही नजदीकी रिश्ता था. वह अपनी अंतरात्मा से लगातार संवाद करते रहते थे.वह हर सोमवार को बिना किसी विघ्न–बाधा के इस संवाद का तल्लीनता से आनंद उठाते थे. इसी को वह कहते थे–डिक्टेटर. अंदर की इसी आवाज़ ने भारतीय राजनीति में बहुत अहम भूमिका निभाई. जब भी उनका सामना किसी की समझाने वाली दलीलों से होता था, तो गांधी अपनी अंतरात्मा की आवाज़ को निर्णायक मानकर आगे कर देते थे. चूंकि लोग उन्हें महात्मा मानते थे, इसलिए उनके पास इसे मान लेने के सिवाय कोई चारा भी नहीं होता था. अगर आप किसी महान आत्मा की अंतरात्मा से ही सवाल करने लगेंगे, तो उसकी रहस्यात्मकता ही कहां बाकी रही.

हालांकि बात निराशावादी लगेगी, लेकिन आज ऐसे सवाल अप्रासंगिक ही हैं. राजनीति में अंतरात्मा की कोई जगह नहीं हुआ करती है. आधुनिक नेताओं में साप्ताहिक मौनव्रत रखने वालों में आकर्षक, शीलवान रामकृष्ण हेगड़े का ही नाम आता है. प्रश्न है कि क्या वह प्रधानमंत्री होते!

हालांकि भारत में कोई भी सरकार मौनव्रत के अवकाश का जोख़िम कम से कम अपनी लोकप्रियता की कीमत पर तो नहीं ही लेगी, लेकिन चुनाव आयोग को न्येपी की अवधारणा को हमारी लोकतांत्रिक प्रक्रिया पर लागू अवश्य करना चाहिए. चुनाव के दौरान सप्ताह में कम से कम एक दिन मौन का आदेश तो देना ही चाहिए. क्या आप चुनाव के दौर में ऐसे 24 घंटे की कल्पना कर सकते हैं, जब धुआंधार भाषण न हों, आरोप–प्रत्यारोप न लगें, टेलीविजन की मांग पर थकी हुए दलीलें देते प्रवक्ता न हों. और, ये लोग उन करोड़ों लोगों की तरह मूकदर्शक बनकर सारे तमाशे को देख सकें? वैसे एक ख़तरा बाकी है. मतदाता भ्रमित हो सकता है.

> **आधुनिक भारत के निर्माता राष्ट्रपिता महात्मा गांधी भी सप्ताह में एक दिन मौन रहते थे. वह हर सोमवार को मौन रखते थे.अगर कोई बैठक भी होती, तब भी यह सिलसिला नहीं टूटता था. यहां तक कि वायसराय के साथ भी अगर सोमवार को बैठक होती थी, तो वह अपने सवाल–जवाब एक क़ागज़ की पर्ची पर लिख कर दे देते थे.**

अभी तक ख़ामोशी मतदाता का विशेषाधिकार रही है, जो कि इस कला में माहिर हो चुका है. अपने बारीक़ चुनाव से वह कई बार करिश्मा भी कर चुका है. इसी का नतीज़ा है कि आज कोई नहीं जानता कि चुनाव का क्या परिणाम निकलेगा. एक उम्मीदवार अवश्य मतदाता के मिजाज़ का अंदाजा लगा सकता है, लेकिन वह ऐसा कतई नहीं मान सकता कि उसके पास पर्याप्त समर्थन नहीं है. ऐसा करेगा तो मनोवैज्ञानिक तौर पर वह मतदान से पहले ही हार जाएगा.

मतदाता मौन के अपने अधिकार का भरपूर आनंद ले रहा है और इसे ख़ास तौर पर उन जनमत–संग्रह करने वालों से बचाकर रखता है जो सवालों की सूची लेकर उसके दिमाग़ की थाह लेने की कोशिश करते हैं. मतदाता ऐसी तस्वीर देने में माहिर हो गया है, जो हक़ीकत से कोसों दूर होती है. इस बारे में मलयाली दिग्गज करुणाकरण की टिप्पणी पर जरा गौर कीजिए. छह दशक से राजनीति कर रहे करुणाकरण से जब पूछा गया कि कौन जीतेगा, तो उन्होंने जवाब दिया कि जिस सीट से जिस उम्मीदवार को सबसे अधिक वोट मिलेंगे वही जीतेगा. क्या कहने...! न्येपी पर बाली में पुजारी द्वीप से बुरी आत्मा को भगाता है. जरा सोचिए, मतदाता भी तो यही करता है.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

रवि किशोर

न्यायिक सक्रियता

भारत में न्यायिक सक्रियता जनहित याचिकाओं के जरिए संभव हुई. न्यायिक सक्रियता यानी जहां न्यायपालिका क़ानून की व्याख्या करने वाले की अपनी परंपरागत भूमिका से बाहर निकल आती है. न्यायपालिका की यह सक्रिय भूमिका सुनिश्चित करती है कि नागरिकों के संविधान प्रदत्त अधिकार और स्वतंत्रताएं सुरक्षित रहें. न्यायिक सक्रियता की प्रक्रिया में न्यायपालिका निर्णायक और क़ानून के व्याख्याकार की भूमिका से अलग हटकर काम करती है और कार्यपालिका के पालन के लिए ऐसे नियम और निर्देश देती है जिनसे नागरिकों के अधिकारों और स्वतंत्रताएं बची रहें.

जनहित याचिकाएं, न्यायिक सक्रियता का ऐसा दस्तावेज़ हैं जिसने जनप्रशासन में न्यायपालिका के योगदान में एक नया आयाम जोड़ दिया है. लोकस स्टैंडाई के महत्व और कानूनी प्रक्रियाओं की जटिलताओं को जनहित याचिकाओं के मामलों में पूरी तरह से ताक पर रखा जा रहा है. शुरुआत में, जनहित याचिकाओं का प्रयोग समाज के उस वंचित तबके के लिए था जो ग़रीबी और अज्ञानता के कारण न्यायालय की मदद लेने में अक्षम था. इसलिए कोई भी व्यक्ति सही जानकारियों के लिए आवेदन कर सकता था. जस टेर्टाई का सिद्धांत, जिसके हिसाब से केवल प्रभावित व्यक्ति ही कानूनी मदद ले सकता है, ही निजी और सार्वजिक कानूनी निर्णयों में लागू होता था लेकिन जनहित याचिकाओं की लहर ने इस सिद्धांत की जगह ले ली.

जनहित याचिकाओं के विषय में सबसे महत्वपूर्ण बिंदु यह है कि यह लोकस स्टैंडाई के परंपरागत सिद्धांत, जिसमें वही व्यक्ति न्यायालय में आ सकता है जिसके क़ानूनी और वैधानिक अधिकारों का हनन हुआ हो, को नकार देता है. बंधुआ मुक्ति मोर्चा बनाम भारतीय संघ के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने बंधुआ मजदूरों की मुक्ति के लिए काम करने वाले संगठन की याचिका पर सुनवाई की. सर्वोच्च न्यायालय ने ज़ोर देकर कहा कि जनहित याचिकाएं कोई विरोध का हथियार नहीं, बल्कि सरकार और उसके अधिकारियों के लिए एक चुनौती और अवसर हैं कि वह समाज के वंचित और असुरक्षित लोगों को मौलिक मानवाधिकार पहुंचाएं और सामाजिक और आर्थिक न्याय सुनिश्चित करें, जो हमारे संविधान की आत्मा है.

जैसा कि न्यायमूर्ति भगवती ने कहा–लोकस स्टैंडाई के सिद्धांत को एक नया आयाम दे दिया गया है जिसने न्याय पाने के क्षेत्र में क्रांति ला दी है. उन्होंने आगे कहा कि ऐसी कोई बाध्यता नहीं है कि जिन अधिकारों की बहाली के लिए न्यायालय का सहारा लिया जा रहा है वह न्यायालय में आने वाले के ही हों. जब किसी व्यक्ति या समूह के मूल अधिकारों का हनन हो और वह ग़रीबी, अक्षमता या सामाजिक या आर्थिक परेशानी की वजह से कानूनी सहायता लेने में अक्षम हो तो कोई भी व्यक्ति उनके अधिकारों की बहाली के लिए न्यायालय जा सकता है. बंधुआ मुक्ति मोर्चा वाले मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने जनहित याचिका के सिद्धांत को समझाते हुए कहा कि जब किसी व्यक्ति या समूह, जिसे मूल अधिकारों के हनन से कानूनी क्षति पहुंची हो और वह सहायता के लिए न्यायालय जाने में किसी वजह से अक्षम हो तो कोई भी व्यक्ति उसकी ओर से न्यायालय जा सकता है. न्यायालय ने आगे कहा कि मूल अधिकार केवल अमीर और संपन्न लोगों के लिए ही सार्थक न रहें बल्कि उन बहुसंख्य लोगों के भी काम आएं जो विपन्नता और ग़रीबी से पीड़ित हैं और जिनके पास क़ानूनी मदद के लिए ज़रूरी जागरूकता और संसाधन नहीं हैं. हालांकि अब जनहित याचिकाएं बहुत विस्तृत काम कर रही हैं. इनका प्रयोग अब एक व्यक्ति के बजाय पूरे समाज की समस्याओं को उजागर करने के औज़ार के रूप में हो रहा है. एसपी गुप्ता बनाम भारतीय संघ के मामले में न्यायमूर्ति भगवती ने कहा–जनता का कोई भी व्यक्ति सार्वजनिक कर्तव्यपूर्ति में कमी या संविधान या कानून के नियम के उल्लंघन से पहुंची क्षति की पूर्ति के लिए कानूनी मदद ले सकता है.

हालांकि जनहित याचिकाओं का प्रयोग याचिकाकर्ता द्वारा अपने स्वार्थ के लिए नहीं किया जाना चाहिए. जनहित याचिका की सुनवाई से पहले न्यायालय को यह पूरी संतुष्टि होनी चाहिए कि याचिकाकर्ता की संबंधित मामले में अभिरुचि है. दूसरे शब्दों में, क्या याचिकाकर्ता के पास लोकस स्टैंडाई है. यह ग़ैरज़रूरी याचिकाओं से बचने के लिए है. कोई भी याचिकाकर्ता जो सार्वजनिक हित के लिए न्यायालय के पास आया हो, उसे स्वच्छ हृदय, स्वच्छ मस्तिष्क और स्वच्छ उद्देश्यों के साथ आना चाहिए.

हमारे संविधान के अंतर्गत दी गई क़ानूनी शक्तियां सर्वोच्च और उच्च न्यायालयों में निहित हैं और वह विधायी और कार्यकारी दोनों के कार्यों की समीक्षा कर सकते हैं. न्यायाधीश अपनी जिम्मेदारी को क़ानूनी और संवैधानिक मामलों के निर्णय तक ही सीमित नहीं कर सकते. क़ानून के व्याख्याकार और न्याय देने वाली संस्था के तौर पर न्यायपालिका की भूमिका को राज्य के दो अन्य स्तंभों–विधायिका और कार्यपालिका–के मतानुसार नहीं समेटा जा सकता है. हालांकि शक्तियों के बंटवारे के सिद्धांत को हमारे संविधान में पूरी सख्ती से नहीं लागू किया गया है, लेकिन हमारे संविधान निर्माताओं ने राज्य के तीनों अंगों को पूरे विस्तार से परिभाषित किया है. विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका संविधान द्वारा परिभाषित कार्यक्षेत्रों में ही काम कर सकती हैं. कोई भी अंग दूसरे के कार्यक्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं कर सकता. न्यायपालिका को संविधान के रक्षक की अपनी भूमिका में यह सुनिश्चित करना होता है कि अन्य दोनों अंग संवैधानिक कार्यक्षेत्रों के अंतर्गत कार्य करें. न्यायिक समीक्षा कार्यपालिका और विधायिका के द्वारा अपनी शक्ति के संवैधानिक प्रयोग को रोकने का एक हथियार है. न्यायिक समीक्षा के बढ़ते क्षेत्र ने सामाजिक और आर्थिक न्याय को भी अपने दायरे में ले लिया है. यह सच है कि सार्वजनिक कानूनी मामलों की सुनवाई करते समय न्यायालय संवैधानिक अधिकारों के साथ–साथ सामाजिक और आर्थिक सच्चाइयों को भी ध्यान में रखते हैं. सर्वोच्च न्यायालय के एक फैसले (सी. रविचंद्रन बनाम न्यायमूर्ति एएम भट्टाचार्य) के दौरान इस विषय पर टिप्पणी करते हुए न्यायमूर्ति के. रामास्वामी ने कहा–फैसले लेने की प्रक्रिया के दौरान न्यायाधीश का काम सिर्फ क़ानून की विवेचना करना ही न होकर सामाजिक और आर्थिक स्थितियों के अनुसार इन क़ानूनों के ऐसे मायने तय करना भी है जो संविधान के आदर्शों को वास्तविक और सार्थक बनाएं. इसलिए न्यायाधीश के लिए ज़रूरी है कि वह कानून के सिद्धांतों के साथ–साथ सामाजिक और आर्थिक सुधारों को भी ध्यान में रखे.

संविधान में निहित स्थायी मूल्यों की बदलत सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों के हिसाब से समय–समय पर नए तौर पर विवेचना आवश्यक है. न्यायालय वर्तमान और बदलती परिस्थितियों को बीच के नाजुक संतुलन को बनाए रखने की जिम्मेदारी निभाता है. यह कार्यपालिका का कर्तव्य है कि वह विधायिका के बनाए क़ानूनों को ईमानदारी से लागू करे. जब कार्यपालिका अपने कर्तव्य पूरे न कर सके तो यह न्यायपालिका का कर्तव्य बन जाता है कि वह कार्यपालिका को उसका कर्तव्य पूरा करने के लिए निर्देशित करे. जब सत्ता में बैठे लोग ही अपराध करें और मशीनरी को बेअसर बनाकर उसे छिपाने का प्रयास किया जाए तो न्यायालय की शरण में जाना ज़रूरी हो जाता है. ऐसे में न्यायपालिका का यह कर्तव्य है कि वह कार्यपालिका के दोषों की पहचान करे और सही तरीके से काम करने के लिए ज़रूरी निर्देश दे. उदारता और आत्मसंयम से परिपूर्ण यह न्यायिक सक्रियता लोकतांत्रिक संस्थाओं में जनता का विश्वास दोबारा लौटा सकती है. ऐसे में यह विश्वास ही कार्यपालिका और विधायिका को न्यायपालिका की देखरेख में कार्य करने के लिए सक्रिय करेगा, जैसा कि संविधान में व्यवस्था है.

जनहित याचिका वह हथियार है, जिसका प्रयोग बड़े ध्यान और सावधानी से होना चाहिए. इसे नागरिकों को सामाजिक न्याय दिलाने के असरदार हथियार के रूप में प्रयोग करना होगा. याचिका का प्रयोग किसी विवाद या शरारत के तहत नहीं होना चाहिए. इसका उद्देश्य किसी वाज़िब सार्वजनिक या निजी क्षति की पूर्ति के लिए होना चाहिए. जनहित याचिका में किसी सरकारी कार्य या उसके तरीके से किसी पर पड़े प्रभाव और कभी–कभी सरकारी नीतियों से जुड़े मामले होते है. इन मामलों में क्षतिपूर्ति मुआवजे के बजाय भविष्य में सुधार से जुड़ी होती है. इस तरह के निर्णयों में न्यायालय की भूमिका सकारात्मक और प्रगतिशील होती है.

हालांकि, सरकार द्वारा लिए गए आर्थिक और वित्तीय फैसलों को जनहित याचिका के द्वारा तब तक चुनौती नहीं दी जा सकती, जब तक कि ऐसा फैसला अनुच्छेद 21 के उल्लंघन में न हो और पीड़ित व्यक्ति न्यायालय तक जाने में अक्षम हो. हालांकि सर्वोच्च न्यायालय सांस्कृतिक विरासत और पर्यावरण की सुरक्षा के लिए हस्तक्षेप कर सकता है लेकिन इससे जुड़े किसी आपराधिक मामले में किसी को दोष देने पर विचार नहीं कर सकता. न्यायालय को किसी के दोष के बारे में जानने के लिए कोई जांच भी नहीं करानी चाहिए. ये बातें सर्वोच्च न्यायालय ने ताज कॉरीडोर मामले में साफ की थीं.

एसपी गुप्ता बनाम भारतीय संघ के मामले में सात न्यायाधीशों की पीठ ने जनहित याचिकाओं के सिद्धांत को परिभाषित करते हुए सार्वजनिक क्षति की इन स्थितियों– सार्वजनिक कर्तव्य में कमी के मामले में–संविधान के किसी नियम के उल्लंघन की स्थिति में–किसी कानून के उल्लंघन की स्थिति में–को चिह्नित किया था.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

प्रिय संपादक महोदय,

हिंदी का पहला साप्ताहिक अख़बार ***चौथी दुनिया*** के 5 से 11 अप्रैल के अंक में धीर के कार्टून ***मेरी दुनिया*** में वरुण गांधी को गलत ढंग से प्रस्तुत किया गया है. जब श्री राम वन में गए तो, वहां तप कर रहे ऋषि–मुनियों ने एक हड्डियों का ढेर दिखाया और बताया कि राक्षसों के समूह ने जिन मुनियों को खा लिया यह उन्हीं की हड्डियों का ढेर है. जब ऐसा सुना तब श्री राम बोले: 'निसिचर हीन करहूं महि, भुज उठाइ पन कीन्ह'. भुजा उठा कर प्रण किया कि मैं पृथ्वी को इन रांक्षसों से रहित कर दूंगा. ठीक ऐसे ही जब पीलीभीत के एक क्षेत्र के लोगों ने बताया कि कुछ दिन पहले यहां दो लड़कियों से बलात्कार हो गया. हमें सुरक्षा चाहिए. तब वरुण ने ऐसे दुष्टकर्मियों को दंड देने की बात कही थी, क्योंकर निर्दोष लड़कियों के हक में और बलात्कारियों के विरोध में बोलना पाप हो गया? जो लोग वरुण का विरोध कर रहे हैं, वे देश की बहन–बेटियों के अपमान का समर्थन कर रहे हैं. वरुण गांधी की आंधी चल पड़ी है, रुकेगी नहीं.वह पूर्ण स्वदेशी शुद्ध भारतीय नारी मेनका गांधी का पुत्र है, इसके दिल में भारत बसा हुआ है.

श्रीनिवास शर्मा शास्त्री

प्रिय संपादक महोदय,

पिछले अंक में विष्णु प्रभाकर जी को श्रद्धांजलि देते हुए एक लेख ***'मेरे जीने के लिए सौ की उमर छोटी'*** पढ़ कर बहुत अच्छा लगा. विष्णु जी के साथ ओम निश्चल की यह मुलाकात इतने साल होने के बावजूद आज भी प्रासंगिक है. आज हिंदी के पाठकों के बीच साहित्य की रुचि रखने वाले लोग कम हो रहे हैं. इस समय आपके अख़बार ने साहित्य की जगह और ताजा खबर दी. उम्मीद करता हूं कि साहित्य के क्षेत्र में आगे भी इस तरह की सामयिक घटनाओं पर लोगों का ध्यान केंद्रित करेंगे.

आपका

टिंकू
खानपुर

चौथी दुनिया
हिंदी का पहला साप्ताहिक अखबार

हम चाहते हैं कि आप अपने क्षेत्र के जागरूक संवाददाता बनें. आप अपने आसपास घट रही घटनाओं, जिनका संबंध, महिलाओं, बच्चों, किसानों, दलितों, अल्पसंख्यकों की समस्याओं उनके संघर्ष, उनपर होने वाले अत्याचार से हो, या आप अपने आसपास राजनीति, पुलिस और बाहुबलियों से जुड़ी घटनाओं पर रिपोर्ट भेजना चाहें, तो हम उनका स्वागत करेंगे. संपादकीय विभाग द्वारा चुनी गई प्रथम रिपोर्ट को तीन हजार रुपए का पुरस्कार दिया जाएगा. कृपया रिपोर्ट अपनी तस्वीर के साथ भेजें. अगर आप रिपोर्ट मेल करना चाहें, तो रिपोर्ट story.chauthiduniya@gmail.com पर भेज सकते हैं.

जब तोप मुकाबिल हो

हम जब तक पाकिस्तान नहीं जाते, तब तक हमारे मन में पाकिस्तान को लेकर कई तरह की तस्वीरें इतनी गहरी बन चुकी होती हैं कि उनसे विपरीत स्थिति का मिलना एक गहरे धक्के का कारण बन जाता है. पाकिस्तान गंदा होगा, वहां के लोग उन्नीसवीं शताब्दी की सोच के होंगे, और हर जगह बमों के धमाके होंगे, लड़कियां पढ़ नहीं रही होंगी और आमलोग हिंदुस्तान को लेकर नफ़रत उगल रहे होंगे. लाहौर पाकिस्तान जाने के लिए भारत के लोगों का पहला दरवाज़ा है. लाहौर को देखिए, तस्वीरें, जो पहले से भारतीयों के दिमाग़ में बनी हुई होती हैं, अपने आप टूटने लगती हैं.

एक शहर जो साफ सुथरा है, इतना साफ सुथरा कि सड़कों पर कूड़ा नहीं दिखाई दिया, जबकि तलाशने की काफी कोशिश की. सफाई तब तक आंखों से नहीं दिखाई देती जब तक कि उसमें नागरिकों की हिस्सेदारी न हो, क्योंकि शहर को साफ रखने की ज़िम्मेदारी निभाने वाली कारपोरेशन अकेले यह काम कभी कर ही नहीं सकती. बहुत कम जगह गंदा पानी या कीचड़ दिखाई दिया, यही नहीं खुले नाले भी नहीं मिले.

सड़कें पूरी तरह बनी हुईं. पता लगाया तो पता चला कि ये सड़कें हर बरसात के बाद नहीं टूट जातीं. अगर बारिश के बाद टूट जाने का सिलसिला होता तो सड़कें बनती नज़र आतीं जबकि सड़कें, चौड़ी सड़कें, साफ सुथरी सड़कें लाहौर के हर हिस्से में दिखाई दीं. इसका मतलब यह भी निकलता है कि सड़क निर्माण में कमीशनखोरी न के बराबर है.

लाहौर के दो हिस्से हैं. एक हिस्सा वह है जिसका ज़िक्र मैं कर रहा हूं और आगे भी करूंगा, पर दूसरा हिस्सा वह है जो पुराना लाहौर कहलाता है और दीवारों के अंदर है. जिसे वॉल सिटी भी कहते हैं. ठीक हमारी दिल्ली की तरह. वैसी ही गलियां, वैसा ही माहौल, वैसा ही अपनापन और प्यार. इस वॉल सिटी और बाहर की दुनिया को जोड़ते बारह दरवाज़े हैं जिनमें दिल्ली दरवाजा, मोरी गेट वगैरह शामिल हैं.

> **लाहौर के दो हिस्से हैं. एक हिस्सा वह है जिसका ज़िक्र मैं कर रहा हूं और आगे भी करूंगा, पर दूसरा हिस्सा वह है जो पुराना लाहौर कहलाता है और दीवारों के अंदर है. जिसे वॉल सिटी भी कहते हैं. ठीक हमारी दिल्ली की तरह. वैसी ही गलियां, वैसा ही माहौल, वैसा ही अपनापन और प्यार. इस वॉल सिटी और बाहर की दुनिया को जोड़ते बारह दरवाज़े हैं जिनमें दिल्ली दरवाजा, मोरी गेट वगैरह शामिल हैं.**

लाहौर के लोग अपने को लाहौरिये कहलाने में गर्व महसूस करते हैं. इनकी ज़िंदादिली देखने लायक है. लाहौर के लोग हर बात को जश्न में बदलने की ताक़त रखते हैं. दिन में अगर गर्मी ज़्यादा है तो शाम को पूरा शहर सड़कों पर आ जाएगा, मेले जैसा माहौल हो जाएगा. अभी कुछ साल पहले भारत ने रावी में ज्यादा पानी छोड़ दिया तो लाहौर पुल के ऊपर से पानी बहने लगा. लाहौर के लोगों ने उसे भी जश्न में बदल दिया. मेले ठेले लग गए, दो दिन वहां खूब रौनक रही. रविवार को लाहौर के ज़्यादातर घरों में खाना नहीं बनता, सभी नाश्ते से लेकर रात के खाने तक बाहर खाना या बाहर से ले जाकर घर पर खाना पसंद करते हैं. लाहौर का रहने वाला ज़्यादा दिनों तक दूसरे शहर में नहीं रह पाता. निसार मलिक साहब कहने लगे, आपको ग़रीबों की बस्ती दिखाते हैं. उनके साथ देखने पर पाया कि अच्छे घर हैं, लम्बा चौड़ा अहाता है, उनकी तरफ देखा तो मुस्कुरा कर बोले कि ये ही ग़रीब हैं, हमेशा चाहते हैं कि इनके यहां और आएं और आएं...

लाहौर के रहने वाले इस बात पर चिंतित हैं कि हिंदुस्तान उन्हें हर बात की जड़ मानता है. इस बात की गहराई का अंदाज़ा कैनेट कॉलेज की लड़कियों से बातचीत के दौरान एक कार्यक्रम में हुआ. जंग के डिप्टी एडिटर डॉ. मुजाहिद मंसूरी ने कैनेट कालेज में, मास कम्युनिकेशन के विद्यार्थियों के साथ, जिनमें सभी लड़कियां थीं, भारत–पाकिस्तान के बीच के हालात पर कार्यक्रम रखा. हॉल खचाखच भरा था–स्टूडेंट्स और टीचर्स से. सभी ने सवाल पूछने शुरू किए, सब के सवाल थे कि क्यों मुंबई ब्लास्ट के पीछे पाकिस्तान का हाथ भारत के मीडिया ने सबसे पहले बताया, कि क्यों हर बात पाकिस्तान के ऊपर ही थोपी जाती है, मुसलमानों को क्यों मीडिया टेररिस्ट दिखा रहा है, क्यों हिंदुस्तान में टेररिस्ट नहीं होते, तो पाकिस्तान में तो मीडिया किसी टेररिस्ट को हिंदू वेशभूषा में नहीं दिखाता.

लगभग तीन घंटे की बातचीत, सवालों का सिलसिला और आख़िर में लड़कियों का कहना कि सर आप तो हम में से एक लगते हैं, आप उन जैसे नहीं हैं जिन्हें हम नफ़रत फैलाते देखते हैं और तालियां... मन को भिगो गया. लड़कियां थीं कि जानकारी से भरी हुई, उत्साह से छलकती हुईं, पढ़ाई के लिए पागल होती हुईं, पाकिस्तान के अच्छे भविष्य में आशा पैदा करती हुईं. लड़कियों का कहना था कि पूरे पाकिस्तान में लड़कियां पढ़ने और बौद्धिक स्तर बढ़ाने में जी जान से लगी हुई हैं, लड़कियों की जो तस्वीर दुनिया में दिखाई जा रही है, वह ग़लत है. पाकिस्तान में साफ–साफ दिखाई दिया कि लड़कियां कार चला रही हैं, बिजनेस चला रही हैं, हर जगह आगे हैं और कहीं भी उस तरह की तो नहीं दिखाई देतीं जैसा उन्हें दिखाया जाता है. बाज़ारों में इक्कीसवीं सदी की लड़कियां पूरे फैशन के साथ, लेकिन सलीके वाले फैशन के साथ अकेली, दोस्तों के साथ, या परिवार के साथ खिलखिलाती दिखाई पड़ती हैं.

बाज़ार, होटल, खाने की जगहें हमारे यहां से बेहतर हैं, कहूं तो अतिशयोक्ति न होगी. कई जगहों पर खाने की जगहें कल्पनाशीलता लिए हुए हैं. लाहौर की फूड स्ट्रीट, सैकड़ों लोग खाना खाने वहां रात में तीन बजे तक जाते हैं. एक लंबी गली, दोनों तरफ होटल, ऊपर रोशनी से लबालब मकानों के छज्जे और नीचे हर तरह का खाना, मिठाई, गरम–गरम जलेबी, उत्साह और आधुनिकता की निशानी. कद्दाफी स्टेडियम के आसपास चारपाइयां, बढ़िया होटल, अच्छा खाना लाहौर के खूबसूरत हंसते–मुस्कुराते परिवार और लक्ष्मी चौक, जहां ऐसी ही खाने पीने की जगहें हैं. लाहौर के लोग खाने पीने के शौक़ीन हैं, ऐसे–ऐसे होटल में गए जो कांसेप्ट के आधार पर बने हैं. एक ही छत के नीचे इतने प्रकार के खाने भारत के किसी होटल में अब तक दिखाई नहीं दिए. साथ खाना खिलाने का तरीका, मेहमानबाजी और नफासत वाला कि खाना खाने वाले का मन खुश हो जाए.

पाकिस्तान के विकास, यहां की ग़रीबी, सामाजिक स्थिति को बदलने की चाह रखने वाले लोग मिले जो पाकिस्तान और हिंदुस्तान की स्थिति से चिंतित दिखे. पाकिस्तान में सुरक्षा को लेकर चिंता है. पाकिस्तान में मध्यवर्ग ख़त्म हो रहा है. या तो ग़रीबी है जो बहुत ज्यादा है या पैसे वाले हैं, जो हैं तो कमसंख्या में, लेकिन ज्यादातर धन उन्हीं के पास इकट्ठा हो गया है. आज पाकिस्तान में कहीं भी यह डर फैला दिखाई दे रहा है कि अगर खुद सावधान न रहे तो कोई भी आपका सामान छीन कर भाग सकता है. मोबाइल, पर्स, हाथ का सामान, औरतों की गले की चेन या हाथों की चूड़ियां बिल्कुल सुरक्षित नहीं हैं. यहां कि पुलिस है जो अपना काम नहीं कर रही. मीनारे पाकिस्तान देखने जाइए तो रात में रोशनी का इंतजाम नहीं, किसी तरह आप पहुंच जाएं तो मीनार पर पाकिस्तान डिक्लेरेशन जिसे कायदे आज़म जिन्ना ने लिखा था, पढ़ नहीं सकते. सारी दुनिया के लोग जाते हैं, अटल बिहारी वाजपेयी भी गए थे पर प्रशासन के पास इतनी फुर्सत नहीं है कि वह वहां रोशनी का इंतज़ाम कर सके. इतना ही नहीं, पास में प्राइवेट झूला चलाने वाले लोग हैं जो रोशनी का इतना इस्तेमाल कर रहे हैं जिससे लगता है कि सरकार के पास बिजली की कमी हो गई है. बदइंतज़ामी तो हमारे यहां भी है. हम भी देश का नाम दर्शाने वाली चीजों का ज़्यादा ध्यान नहीं रख पाते.

लाहौर में कई मंदिरों के प्रमुख मिले. यहां लोगों से बात हुई. पता चला कि कोई ऐसा त्यौहार नहीं है जिसे यहां के हिंदू और सिख न मनाते हों. उनकी खुशी में मुसलमान भी शामिल होते हैं. मंदिरों के ट्रस्टों के अध्यक्ष मुसलमान हैं और ये गर्व से बताते हैं कि वे कितना काम कर रहे हैं. हिंदू अल्पसंख्यकों ने बिना किसी हिचक से बताया कि हम न केवल खुश हैं बल्कि सुरक्षित भी हैं. बाबरी मस्ज़िद की शहादत के वक्त ज़रूर थोड़ी परेशानी हुई पर उसके बाद कुछ नहीं हुआ. यहां रहने वाले उर्दू लिखते, पढ़ते और बोलते हैं.

आखिर में ग़द्दाफी स्टेडियम के बारे में जहां खाना खाने वाले सारी रात जाते हैं. यहां श्रीलंका की क्रिकेट टीम को लेकर उसका ड्राइवर आ गया था. इससे पहले लिबर्टी चौक पर आतंकवादियों ने उस बस पर हमला कर दिया था. सारी दुनिया ने देखा. जब लिबर्टी चौक गए तो देखा कि यह तो बीच बाज़ार में है और यहां दिनदहाड़े कई घंटों, गोली चले, कैसे संभव है. लेकिन यह हुआ और इसके बहुत से गवाह मिले. जिस फायरिंग को सबने टीवी पर देखा उसे यहां की एक कैमरा दुकान के मालिक ने अपने आप चोरी से शूट कर लिया था. आसपास बड़ी दुकानें हैं, पर जैसे हिंदुस्तान में हर जगह पुलिस नहीं होती वैसे ही पाकिस्तान में नहीं होती. पर पुलिस जांच अब लगभग बंद हो गई है और लोगों को लगता है कि कुछ निकलेगा ही नहीं. हमारे यहां भी किसी जांच से कहां कुछ निकलता है.

हमारे दर्द साझा हैं, तकलीफें साझा हैं पर हम कभी एक साथ उन पर सोचते ही नहीं. पाकिस्तानी नौजवान और पाकिस्तान के लोग अब इस ओर ध्यान देने लगे हैं, यह सबसे खुशी की बात लगी. अगर लाहौर में कोई सवाल करे कि क्या हिंदुस्तान में मुशायरे होते हैं या कि क्या वहां उर्दू अब भी बोली जाती है, तो यही कहना पड़ता है कि आप आइये और खुद देखिए. ये खुद देखना ही कई नहीं बहुत से सवालों का हल है. और अब सवालों को हल करने का वक्त आ गया है.

संपादक

feedback.chauthiduniya@gmail.com

मोहभंग से नहीं बन रही बात

लोकसभा चुनाव के आसन्न एक प्रश्न उत्तर प्रदेश की जनमानस को आंदोलित करता नजर आ रहा है. क्या बसपा की सोशल इंजीनियरिंग, जिसने ब्राह्मण–दलित को एक पाले में लाकर विधानसभा के चुनाव (2007) में अपने विरोधियों को धूल–धूसरित कर दिया था, इस बार कारगर होगी?

प्रथम चरण के तहत हुए चुनाव, जिसमें पूर्वी उत्तर प्रदेश की 16 सीटों पर मतदान हुआ, इस पर प्रश्नचिह्न लगाते हैं. मतदाताओं के रुख और कार्यकर्ताओं के कदम इस बात की पुष्टि करते हैं कि ब्राह्मण मतदाताओं में बसपा उम्मीदवारों के प्रति वैसा आकर्षण परिलक्षित नहीं हो रहा है जैसा कि विधानसभा के चुनाव में दिखा था. वैसे मुख्यमंत्री मायावती ने आकर्षित करने के लिए लोकसभा चुनाव में उत्तर प्रदेश में 80 में से 19 प्रत्याशी ब्राह्मणों को बनाया. सत्ता के ताने–बाने से वाकिफ ब्राह्मण समाज के लिए यह प्रस्तावना श्रेयष्कर दिखता है. सालों से सत्ता सुख से वंचित रहे ब्राह्मण अपनी मज़बूत उपस्थिति (संसद और विधानसभा) से ही अपने को राजनीतिक रूप से सशक्त कर सकते हैं. लेकिन राजनीति के ठोस धरातल पर पहुंचने से ऐसा लगता है कि ब्राह्मण को यह प्रस्तावना आकर्षक नहीं लगता है. परिणामस्वरूप अनेक चुनाव क्षेत्रों में, जहां ब्राह्मणों के मत काफी अधिक है, बसपा उम्मीदवार अन्य के मुकाबले में पिछड़ते नजर आ रहे हैं. वैसे तो ब्राह्मणों का झुकाव मुख्यत: कांग्रेस पार्टी की ओर होता था, पर इस संगठन में शक्तिहीन होने और नेहरू–गांधी परिवार की राजनीतिक भागीदारी कम होने से ब्राह्मण कालांतर में भाजपा की ओर मुखातिब हो गए. ख़ासकर अटल बिहारी वाजपेयी के प्रधानमंत्री बनने के पश्चात, पर उत्तर प्रदेश के ब्राह्मणों ने अपने को वहां भी सहज नहीं पाया और वे पुन: एक घर की तलाश में जुट गए. इसी क्रम में उन्होंने अपना पड़ाव बसपा में बनाया.

> **बसपा महासचिव सतीश चंद्र मिश्र का महिमा मंडन और विधानसभा चुनाव में ब्राह्मणों को 86 टिकट देकर मायावती ने इस गठजोड़ को सशक्त किया, पर इस लोकसभा चुनाव में इस गठजोड़ की परतें खुलती नजर आ रही हैं. अनेक ब्राह्मण नेता, जो सांसद बनने की ललक में चुनावी समर में जुटे हैं, अपने को कमजोर पा रहे हैं.**

बसपा महासचिव सतीश चंद्र मिश्र का महिमा मंडन और विधानसभा चुनाव में ब्राह्मणों को 86 टिकट देकर मायावती ने इस गठजोड़ को सशक्त किया, पर इस लोकसभा चुनाव में इस गठजोड़ की परतें खुलती नजर आ रही हैं. अनेक ब्राह्मण नेता, जो सांसद बनने की ललक में चुनावी समर में जुटे हैं, अपने को कमजोर पा रहे हैं.

सर्वप्रथम हम बात करते हैं माफिया सरगना से राजनीतिक तक का सफर करने वाले हरिशंकर तिवारी का, जिनके दो पुत्र विनयशंकर तिवारी और भीष्म शंकर तिवारी जो क्रमश: गोरखपुर और संतकबीर नगर में बसपा उम्मीदवार के रूप में मैदान में हैं. इन दोनों चुनाव क्षेत्रों में ब्राह्मण मतदाताओं का झुकाव भाजपा व अन्य पार्टियों की ओर दीखता है. बसपा इन दोनों सीटों पर पिछड़ती नजर आ रही है, जबकि ब्राह्मण मतदाताओं की अच्छी तादात इन क्षेत्रों में हैं. इसी प्रकार लखनऊ से सटे उन्नाव सीट की ओर नज़र डालें तो पता चलेगा कि यह बसपा उम्मीदवार अरुण शंकर शुक्ला उर्फ अन्ना की स्थिति दयनीय है.

कानपुर से बसपा उम्मीदवार सुखदा मिश्र भी अपने को ब्राह्मण के बीच अलोकप्रिय पा रही हैं. पूर्व मंत्री सुखदा मिश्र अभी हाल तक भाजपा में थीं. यहां ब्राह्मण का झुकाव कांग्रेस की ओर दिखता है. पूर्व मंत्री श्याम सुंदर शर्मा, जो कई दलों को अपनी सेवा अर्पित करने के बाद बसपा के टिकट पर किस्मत आजमा रहे हैं, अपने को मझधार में पा रहे हैं.

इसी प्रकार फैजाबाद से अयोध्या के राजा के रूप में ख्याति अर्जित करने वाले विमल मिश्र की स्थिति भी फैजाबाद में अच्छी नहीं कही जा सकती. यहां ब्राह्मणों का झुकाव भाजपा की ओर नज़र आ रहा है. कैसरगंज से पत्तू अवस्थी (सुरेंद्र नाथ अवस्थी) भी अपने क्षेत्र में ब्राह्मणों का समर्थन हासिल करने में असमर्थ लग रहे हैं. अमेठी में यदि ब्राह्मण मतदाताओं का झुकाव बसपा उम्मीदवार की तरफ नहीं हो रहा है, तो हम मानते हैं कि ऐसा परिस्थिति विशेष के तहत हो रहा है. पर कुछ सीटों को छोड़कर अन्य क्षेत्रों में स्थिति बेहतर नहीं है. बावजूद इसके, बसपा के ब्राह्मण उम्मीदवार अशोक वाजपेयी इलाहाबाद से, भैरो प्रताप मिश्र चित्रकूट से, शिवाकांत ओझा प्रतापगढ़ से और सीमा उपाध्याय (मंत्री रामवीर उपाध्याय की पत्नी) अपने–अपने क्षेत्रों में ब्राह्मणों का समर्थन प्राप्त करने में सफल लग रहे हैं. झांसी के बसपा उम्मीदवार रमेश शर्मा की जीत के बारे में अनुमान लगाना कठिन है, पर उन्होंने अपने क्षेत्र में ब्राह्मणों का अच्छा समर्थन प्राप्त कर लिया है. कुछ चुनाव क्षेत्र ऐसे हैं, जहां ब्राह्मणों की संख्या 10 से 30 प्रतिशत के बीच है और अन्य वर्ग के मतदाताओं को भी प्रभावित कर सकते हैं. वस्तुत: ब्राह्मण मतदाताओं की बसपा से अलगाव का एक बड़ा कारण उम्मीदवारों के आपराधिक बैकग्राउंड का होना माना जा रहा है. ऐसा कहा जा रहा है कि अन्य पार्टियों यानी कांग्रेस और भाजपा के ब्राह्मण उम्मीदवार अपेक्षाकृत दाग़दार नहीं हैं. इसके साथ ही केंद्र में एक मजबूत सरकार की अपेक्षा मतदाताओं का एक वर्ग राष्ट्रीय पार्टियों से ही करता है. इसी क्रम में बसपा की तरफ ब्राह्मण मतदाताओं का झुकाव कम होता नज़र आ रहा है. अब देखना यह है कि चुनाव में इसकी कैसी परिणति होती है.

राजीव रंजन झा

feedback.chauthiduniya@gmail.com

अब वोटों पर डाका डालने की तैयारी

इंदू सिंह

मध्यप्रदेश में अधिकतर जनता को भयमुक्त होकर अपने लोकतांत्रिक अधिकारों के इस्तेमाल की इजाज़त नहीं दी जा रही है. यह चुनाव आयोग या भाजपा के शिवराज सिंह चौहान की सरकार का कोई फरमान नहीं, बल्कि यह है रीवा, सतना, खजुराहो, भिंड, ग्वालियर, मुरैना और दमोह लोकसभा क्षेत्रों में छाया डाकुओं का आतंक. यह बात सही है कि चंबल के बीहड़ों में अब पहले की तरह डाकुओं का एकछत्र राज नहीं रहा. खासकर निर्भय गुर्जर, ठोकिया और ददुआ सरीखे दुर्दांत डाकुओं का ख़ात्मा करने के बाद जहां मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश की सरकारों में निश्चिंतता का भाव आ गया था, वहीं जनता में भी यह आशा जगी थी कि अब वे डाकुओं के भय के बजाय विकास की छाया में जी सकेंगे. लेकिन हक़ीकत में ऐसा होता नजर नहीं आ रहा. सच तो यह है मध्यप्रदेश के अलावा उत्तरप्रदेश से लगते कई ज़िलों में कम से कम एक दर्जन डकैत गिरोह अभी भी सक्रिय हैं. वर्चस्व दिखाने के लिए वे लोकसभा चुनावों का पूरा फायदा उठाने की तैयारी में लग रहे हैं. यही वजह है कि चुनाव आयोग ने मध्यप्रदेश की सात लोकसभा सीटों के सवा तीन हजार से ज्यादा मतदान केंद्रों को अति संवेदनशील घोषित कर दिया है. इनमें से तीन लोकसभा सीटों खजुराहो, रीवा और सतना में पहले चरण में 23 अप्रैल को मतदान होना है. गौरतलब है कि राज्य में 23 अप्रैल से शुरू होने जा रहे लोकतंत्र के महासंग्राम के पहले चरण में कुल 29 में से सात लोकसभा सीटों के लिए वोट पड़ेंगे. सूत्रों के मुताबिक हाल ही में सतना जिले के मझगवां थाना क्षेत्र के बिछियन गांव में 12 लोगों को ज़िंदा जलाने से फैली दहशत का लाभ उठाने में डाकू कोई कोर-कसर नहीं छोड़ रहे हैं. ख़ासकर सतना और रीवा में तो इस बात के पूरे आसार हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में लोग डाकुओं के फरमान को नजरअंदाज़ करने का ख़तरा उठाने की हालत में नहीं हैं. रीवा रेंज़ के डीआईजी केपी खरे को भी आशंका है कि डाकू उनके क्षेत्र में चुनाव प्रक्रिया को प्रभावित कर सकते हैं. इसके निपटने के लिए मतदान केंद्रों में सशस्त्र पुलिस कर्मी लगाने और पेट्रोलिंग के अलावा जंगलों में उत्तरप्रदेश पुलिस के सहयोग से तलाशी अभियान भी शुरू कर दिया गया है. लेकिन पुलिस की यह कवायद कई दशकों से डाकुओं के भय तले जी रहे ग्रामीणों को निडर बनकर मनमाफिक मतदान करने में मदद कर सकेगी, इसमें शक है. यहां यह बात ध्यान देने वाली है कि नक्सलवादियों से उलट डाकुओं ने इस बात का फरमान जारी नहीं किया है कि लोग वोट न डालें. उल्टे वे चाहते हैं कि लोग खूब वोट डालें, पर उनकी पसंद के उम्मीदवार को. आख़िर इसी के लिए तो उन्होंने रुपये लिए हैं. यह बात अलग है कि कुल राशि पर विवाद है. हाल ही में सरकारी खुफिया एजेंसी के सूत्रों ने बताया था कि डाकू गिरोहों ने प्रत्याशियों से प्रति लोकसभा सीट 40-40 लाख रुपये वसूले हैं. अब कुछ आला सूत्र दावा कर रहे हैं कि यह राशि 40 लाख न होकर 25 लाख ही है. बहरहाल, यह तो सच है कि बुंदेलखंड व विंध्य क्षेत्र में फैले डाकुओं ने अपने भय को वोटों में बदलकर प्रत्याशियों से रुपये उगाही का अच्छा-खासा इंतजाम कर लिया है. हाल ही में डाकू सुंदर पटेल, रामसिंह गोंड, खरदूषण, सुदेश पटेल के अलावा करीब 17 गिरोह सदस्यों ने सतना के बांका, चमरौहा कुसुमही व इनसे जुड़े क़रीब एक दर्जन क्षेत्रों में ग्रामीणों के साथ बैठक कर अपने पसंदीदा उम्मीदवार के पक्ष में वोट डालने की नसीहत दी है. इनके अलावा दीपक पटेल और चुक्की यादव का आतंक भी इन इलाकों में अच्छा-ख़ासा फैल रहा है. माना जा रहा है कि इनमें से ज्यादातर को राजनीतिक संरक्षण मिला हुआ है. यही कारण है कि पुलिस, प्रशासन उनके बेहद करीब तक पहुंचकर भी उन्हें छोड़ने को मजबूर हो जाता है. अगर चंबल के बीहड़ों की बात करें तो निर्भय गुर्जर की मौत के बाद आई शांति फिर से अशांति में बदलने लगी है. यहां के बीहड़ों में हाल तक जगन गुर्जर अपहरण कर फिरौती मांगा करता था. लेकिन कुछ समय पहले उसने राजस्थान में एक कांग्रेस नेता की सभा में समर्पण कर दिया. वह राजनीतिक शरण की तलाश में है. उसके कई सदस्य अभी भी बीहड़ों में हैं और यह कहना थोड़ा मुश्किल होगा कि जगन के प्रभाव का इस्तेमाल चुनावी लाभ के लिए नहीं उठाया जाएगा. इस बीच, चुनावों को नोटों की फसल काटने के त्योहार के तौर पर मनाने की पूरी जुगत कर रहे डाकुओं में राजेंद्र गुर्जर, पंजाब सिंह, रामवीर गुर्जर, रामविशेष गुर्जर और मेवाराम जाटव सरीख़े गिरोह भी हैं. ये पुलिस की सक्रियता से पिछले कुछ समय से चुपचाप बैठे हुए हैं, लेकिन उनके राजनीतिक इस्तेमाल की आशंका से इंकार भी नहीं किया जा सकता.

अगर डाकू प्रभावित इन तीन लोकसभा सीटों का जायज़ा लिया जाए, तो हम देखते हैं कि सतना से कुल 21 प्रत्याशी मैदान में हैं. इनमें मुख्य मुक़ाबला भाजपा के गणेश सिंह और कांग्रेस के सुधीर सिंह तोमर के बीच है. यहां वोट काटने के लिए सपा व बसपा ने अपने प्रत्याशी खड़े किए हैं. वहीं अपना दल, गोंडवाना गणतंत्र पार्टी व आरपीआई सरीख़ी क्षेत्रीय पार्टियों समेत नौ निर्दलीय प्रत्याशी भी किस्मत आज़मा रहे हैं. ऐसे में अगर डाकुओं के पसंदीदा प्रत्याशी को वोट देने के फरमान पर अमल किया गया तो कांग्रेस और भाजपा में से किसी एक को सीधा नुक़सान होने की आशंका है. वहीं खजुराहो में भी, जहां पहले चरण के चुनाव होने जा रहे हैं, कुल 15 प्रत्याशी खड़े हैं. इनमें मुख्य मुक़ाबला भाजपा के जितेंद्र सिंह और कांग्रेस के राजा पटैरया के बीच है. यहां भी समाजवादी पार्टी के जयवंत सिंह, बसपा के सेवालाल पटेल और जद (यू) की सरोज बच्चन नायक सरीख़े प्रत्याशी क़िस्मत आज़मा रहे हैं. यहां सबसे रोचक प्रत्याशी हैं पूर्व विधायक व किन्नर शबनम मौसी, जो निर्दलीय के तौर पर चुनाव लड़ रही हैं. उन्हें इस बात की पूरी उम्मीद है कि लोग कमल, हाथ और हाथी की लड़ाई में उलझने के बजाय उनके जैसी निर्दलीय को ही वोट देंगे.

वहीं सबसे रोचक मुक़ाबला रीवा में नज़र आ रहा है. यहां भाजपा के वर्तमान सांसद चंद्रमणि त्रिपाठी का मक़ाबला आधिकारिक तौर पर तो मध्यप्रदेश के पूर्व विधानसभा अध्यक्ष श्रीनिवास तिवारी के बेटे और कांग्रेस प्रत्याशी सुंदर लाल तिवारी से बताया जा रहा है, लेकिन बहुजन समाज पार्टी के देवराज सिंह पटेल और समाजवादी पार्टी के पुष्पराज सिंह ने इन दोनों की लड़ाई की धार कुंद कर रखी है. वैसे यहां असल मुकाबला इन चारों बनाम वीणा सिंह है, जो कांग्रेस नेता अर्जुन सिंह की बेटी हैं और टिकट न मिलने के बाद यहां से निर्दलीय चुनाव लड़ रही हैं. क्षेत्र में अर्जुन सिंह के परिवार व वीणा सिंह का प्रभाव इस कदर छाया हुआ है कि आधिकारिक तौर पर सुंदर लाल तिवारी को कांग्रेस प्रत्याशी घोषित किए जाने के बावज़ूद स्थानीय कांग्रेस कार्यकर्ता या तो घर बैठ गए हैं या फिर वीणा सिंह के पक्ष में खामोशी से माहौल बना रहे हैं. उनके भाई अजय सिंह का चुनाव प्रचार भी इस रुझान को कांग्रेस के पक्ष में मोड़ पाने में कामयाब होता नजर नहीं आ रहा.अगर वीणा सिंह का नारियल (उनका चुनाव चिह्न) भाजपा के कमल और कांग्रेस के हाथ पर भारी पड़ जाए तो बहुत आश्चर्य नहीं होगा.

सभी फोटो-***पंकज नागिया***

feedback.chauthiduniya@gmail.com

ममता की कठोर परीक्षा

बिमल राय

कोलकाता के नेताजी इनडोर स्टेडियम में 14 अप्रैल को बांग्ला नववर्ष पर एक समारोह हुआ था. पश्चिम बंगाल सांस्कृतिक मंच के इस समारोह में ममता भी बुलाई गई थीं और मंच पर लिखे एक नारे की ओर बार-बार देख रही थीं. वहां लिखा था-जय होक, जय होक, नतुन अरुणोदय. यानी जय हो, जय हो, नया अरुणोदय! जी हां! बंगाल में विपक्ष नए अरुणोदय की प्रतीक्षा पिछले 32 सालों से कर रहा है. इनडोर में जय हो के नारे से मुग्ध ममता और बाहर सड़कों पर जय हो का कैसेट बजा रही कांग्रेस-दोनों ने बंगाल में पहली बार बदलाव की हवा बनाई है. 30 अप्रैल, 7 और 13 मई को तीन चरणों में कुल 42 सीटों पर होने वाले चुनाव के लिए दोनों दल दूसरी बार साथ लड़ रहे हैं. पहली बार दोनों को लगा है कि अगर ऐसा नहीं हुआ तो सत्ता की मखमली सेज के लिए और 32 साल तक इंतजार करना पड़ सकता है. यह हकीकत है कि लोकसभा चुनाव में उल्लेखनीय क़ामयाबी मिलने के बाद राज्य के अगले विधानसभा चुनावों के लिए दोनों दल और बेहतर तरीक़े से एक होकर मैदान में उतर सकते हैं.

राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (एनडीए) का साथ छोड़ना और कांग्रेस के क़रीब आने के लिए ममता को काफी जद्दोजहद करनी पड़ी. यह इस रुख़ से दिखा कि उन्होंने पिछले साल दिसंबर तक कभी भी साफ शब्दों में नहीं कहा कि वह एनडीए से बाहर हैं. हाल तक वह कांग्रेस को माकपा की बी टीम मानती थीं, पर जब उन्हें लगने लगा कि भाजपा को साथ लेकर यहां वामदलों को नहीं हराया जा सकता, तो उन्होंने कांग्रेस का दामन थाम लिया. दोनों दलों की करीबी 2008 के पंचायती चुनावों के परिणाम आने के बाद से ही बढ़ने लगी थी. इन परिणामों से पता चला कि 2003 में जिस वाममोर्चा ने पंचायती चुनावों में कुल 2303 सीटें जीती थीं, उसे 2008 में 1597 सीटों पर संतोष करना पड़ा. पंचायत समिति की सीटें भी काफी कम हो गईं. 2003 की 265 की जगह वामदलों के खाते में 183 सीटें ही आईं. दूसरी तरफ, कांग्रेस व तृणमूल ने अपनी सीटों की संख्या दोगुनी कर ली. 2003 के स्थानीय निकायों के चुनावों में विपक्ष को पंचायत की 744 सीटें मिली थीं, पर 2008 में यह आंकड़ा 1479 पर पहुंच गया. पंचायत समितियों की सीटों के मामले में 2003 में 40 सीटें जीतने वाले विपक्ष ने पिछले साल 126 सीटों पर अपनी जीत का परचम लहराया. जिला परिषद की सीटों के परिणाम भी वाममोर्चा को हताश करनेवाले थे. सिंगुर और नंदीग्राम मामलों पर ममता के आंदोलन का ही नतीजा था कि हुगली, उत्तर 24 परगना, हावड़ा, नदिया, दक्षिण 24 परगना, मालदा, उत्तर दिनाजपुर, वीरभूम और एक हद तक पुरुलिया में वामदलों का ग्रामीण वोट बैंक खिसकता दिखा. नंदीग्राम और सिंगुर आंदोलन के बाद पहली बार ममता को ग्रामीण वोटरों का समर्थन मिला और यही वाममोर्चा के लिए परेशानी का सबब बना हुआ है.

नंदीग्राम विधानसभा सीट के लिए हुए उपचुनाव में तृणमूल की जीत के बाद ही साफ हो गया कि अगर कांग्रेस-तृणमूल के बीच तालमेल होता है तो वाममोर्चे को जोरदार झटका दिया जा सकता है. रही सही कसर विष्णुपुर-उत्तर सीट पर हुए उपचुनाव ने पूरी कर दी, जहां से कांग्रेस समर्थित तृणमूल प्रत्याशी ने माकपा से सीट छीन ली. इसके बाद हिचकोले खाते ही सही, पर गंठबंधन वार्ताओं का दौर चला. आख़िर में ममता ने अपनी शर्तों पर समझौता किया. तालमेल के समय प्रियरंजन दासमुंशी की पत्नी दीपा दासमुंशी की अगुआई वाले एक गुट ने अपनी नाराज़गी नहीं छिपाई और साफ कहा कि ममता के सामने इतना झुकने की ज़रूरत नहीं थी. अब इसे मज़बूरी कहें या रणनीति, आलाकमान की इच्छा के आगे प्रदेश के नेताओं की एक नहीं चली.

कांग्रेस के पास लोकसभा की छह सीटें थीं, जबकि पिछले चुनाव में ममता केवल अपनी सीट ही जीत पाई थीं. इसके बावज़ूद उन्होंने कांग्रेस को मात्र 14 सीटें देकर चुप करा दिया. कांग्रेस को जो सीटें दी गई हैं, उनमें पिछली बार की जीती गईं छह सीटों के अलावा कम से कम छह ऐसी सीटें हैं, जो वामदलों का दुर्ग कही जाती हैं. ममता ने दक्षिण बंगाल की एक भी सीट पर कांग्रेस को हाथ रखने नहीं दिया. मिसाल देख लीजिए. कांग्रेस को आरामबाग सीट दी गई है, जिसपर मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी का प्रत्याशी लगभग छह लाख मतों के अंतर से जीता था. हारी थी भाजपा, जिससे तृणमूल ने तालमेल किया था. इसी तरह बोलपुर और बांकुड़ा पुरुलिया की सीटें माकपा ने क्रमश: 3.10 लाख व 2.30 लाख के मतों के अंतर से जीती थीं. अब इन सीटों पर चुनाव लड़ रहे कांग्रेस प्रत्याशी अगर संकट में दिख रहे हैं तो इसमें कुछ भी अस्वाभाविक नहीं है.

2004 के चुनावों में राज्य की 42 सीटों में वाममोर्चा ने 35 सीटें जीतकर संसद में अपना एक बड़ा ब्लाक बनाया. कांग्रेस को छह और तृणमूल को एक सीट ही मिली. वामदलों को 47 प्रतिशत और बाक़ी विपक्ष को 43 प्रतिशत वोट मिले. पिछले चुनाव तक वाममोर्चा का वोट प्रतिशत लगभग समान ही था. जैसे 1989 में उसे 50.51 प्रतिशत, 1991 में 47.1 प्रतिशत, 1996 में 48.7 प्रतिशत, 1998 में 46.82 प्रतिशत व 1999 में उसे 46.76 प्रतिशत वोट हासिल हुए. इस बार ममता ने पहली बार, हल्की ही सही, मगर सत्ता विरोधी हवा तैयार कर दी है. यही वजह है कि ज्योति बसु जैसे दिग्गज नेता का भी ईमानदार आकलन है कि इस बार वाममोर्चा को कुछ सीटों का नुकसान उठाना पड़ेगा. विभिन्न सर्वेक्षणों के जरिए यह अनुमान लगाया गया है कि इस बार वाममोर्चा को कम से कम 10 सीटों का नुक़सान उठाना पड़ सकता है. वैसे वाममोर्चा नैनो कार के बहाने शहरों में ममता के ख़िलाफ़ ज़ोरदार प्रचार में लगा है, जबकि ममता बता रही हैं कि राज्य के लोगों को कार नहीं, भात चाहिए.

कई घटक भी हैं बग़ावती तेवर में

ऐसा नहीं है कि कांग्रेस और तृणमूल के बीच सीटों के तालमेल से ही सब कुछ ठीक हो गया है. पिछले चुनावों में ममता से गठबंधन के बूते राज्य के हिंदी भाषी बहुल शहरी इलाक़ों व बांग्लादेशी घुसपैठ का मुद्दा जोर-शोर से उठाने के कारण सीमावर्ती इलाक़ों में भाजपा ने अपना अच्छा जनाधार बनाया है. पर इस बार वह राज्य में अकेले चुनाव लड़ रही है. यहां तक कि ममता के अपने गठबंधन की एसयूसीआई जैसी पार्टी भी उनका कहना नहीं मान रही है और उसने नौ सीटों पर कांग्रेस प्रत्याशियों के ख़िलाफ़ उम्मीदवार खड़े कर दिए हैं. 14 अप्रैल को कांग्रेस के बंगाल प्रभारी केशव राव कोलकाता में थे और उन्होंने ममता से एसयूसीआई को मनाने का एक बार फिर प्रयास करने का आग्रह किया. ममता ने एसयूसीआई को जयनगर की एक सीट दी है और क्षुब्ध कांग्रेस ने वहां भी अपना उम्मीदवार खड़ा करने की घोषणा की है. ममता के साथ सिंगुर व नंदीग्राम आंदोलनों में साथ रही समाजवादी पार्टी ने भी अपने उम्मीदवार खड़े किए हैं. सपा ने नंदीग्राम के शहीदों के परिजनों को एक-एक लाख रुपये की सहायता दी थी और इसका वितरण ममता के हाथों ही कराया था. यहां तक कि सिंगुर मसले पर ममता के धरने में समाजवादी पार्टी के राज्य अध्यक्ष विजय उपाध्याय भी शामिल हुए थे. कोलकाता व आसपास के हिंदी भाषी बहुल इलाक़ों में सपा का थोड़ा जनाधार है और कुछ ज़ोरदार मुक़ाबले वाली सीटों, ख़ासकर हावड़ा में ममता को झटका लग सकता है, जहां से विजय उपाध्याय खुद खड़े हैं. सपा को एक सीट देने के लिए खुद अमर सिंह ने ममता से आग्रह किया था. खैर, इन छोटे-छोटे दलों को अगले विधानसभा चुनावों में कुछ सीटों का आश्वासन देकर ममता साथ लेने की कोशिश में हैं.

देश के दूसरे गठबंधनों की तरह बंगाल के इस गठबंधन में भी कम सस्पेंस नहीं है. ममता ने पहले साफ कर दिया था कि कांग्रेस यह वचन दे कि चुनाव के बाद वह माकपा का सहयोग नहीं लेगी. कांग्रेस ने इस समय भले ही गोलमटोल आश्वासन दे दिया हो, पर बंगाल कांग्रेस के मुखिया प्रणव मुखर्जी के हाल के बयानों से उनका मजबूरी का वाम प्रेम झलक रहा है. इधर, ममता भी अपनी सभाओं में भाजपा के ख़िलाफ़ तीखे तेवर नहीं अपना रही हैं. अब इसमें कोई शक नहीं कि धर्मनिरपेक्षता की कथित रक्षा के लिए अगर कांग्रेस ने वामदलों से हाथ मिलाया तो ममता एक बार फिर एनडीए को समर्थन दे सकती हैं.

2004 : जहां विपक्षी वोटों का प्रतिशत ज्यादा था विपक्ष में केवल कांग्रेस, तृणमूल व भाजपा शामिल

अलीपुरद्वार	वाममोर्चा	45.70 प्र.	विपक्ष 48.6 प्र.
बालुरघाट	वाममोर्चा	44.87 प्र.	विपक्ष 50.5 प्र.
कृष्णनगर	वाममोर्चा	42.73 प्र.	विपक्ष 50.8 प्र.
नवद्वीप	वाममोर्चा	47.56 प्र.	विपक्ष 49.31 प्र.
बरासात	वाममोर्चा	45.13 प्र.	विपक्ष 49.99 प्र.
कोल.उ.प.	वाममोर्चा	42.15 प्र.	विपक्ष 52.96 प्र.
श्रीरामपुर	वाममोर्चा	42.70 प्र.	विपक्ष 53.83 प्र.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

बाढ़ के बाद वादों की बरसात

भयावह बाढ़ से जर-जर बिहार के कोसी क्षेत्र में इन दिनों वादों की बरसात हो रही है. तबाह हो गई ज़िंदगी को पटरी की ज़द्दोज़हद में लगे लोगों को लाउडस्पीकरों से शोर करने वाले बरसाती मेढ़क से अधिक नज़र नहीं आते. जिन्होंने बाढ़ के दिनों में पीड़ितों के बीच काम किया था, वे निश्चिंत हैं. लेकिन हवा-हवाई राजनीति करने वाले चुनावी बिसात पर जातिगत पासे फेंकने में लगे हैं. इसका असर भी पड़ रहा है. इसीलिए कई प्रत्याशियों को अपने कार्यों के बेकार चले जाने का भय भी सता रहा है. ग़ैरविकासपरक राजनीतिक मुद्दे और जातीय समीकरण सचमुच चुनाव परिणामों को प्रभावित करेंगे.

कोसी क्षेत्र में जातिगत समीकरणों की आड़ में विकास के झूठे वादों और लुभावने नारों से लोगों को लुभाने की परिपाटी रही है. ख़ासकर बाढ़ के दिनों में जब क्षेत्र की जनता ज़िंदगी और मौत के भंवर में फंसी थी, तब कुछ नेताओं ने उनके बीच काम करके सहानुभूति बटोरी थी. सहानुभूति की फसल काटने का वक्त आ गया है. इसमें कोई दो राय नहीं कि पूर्णिया से उदय सिंह उर्फ पप्पू सिंह, सुपौल से रंजीता रंजन और बबलू सिंह कुछ ऐसे नाम हैं, जिन्होंने दिन-रात एक करके बाढ़ पीड़ितों की मदद की थी. इसलिए यह तय है कि बाढ़ पीड़ित चुनाव में उनका ख्याल अवश्य रखेंगे.वैसे प्रशासनिक तंत्र द्वारा राहत शिविरों में दी गई सुविधाएं और मुख्यमंत्री नीतीश कुमार का दौरा जातिगत समीकरणों को तोड़ सकता है. हालांकि इन सबके बीच एक और आवाज़ वोट-बहिष्कार की भी उभर कर सामने आ रही है. कोसी मुक्ति संघर्ष मोर्चा समिति के बैनर तले बाढ़ पीड़ितों ने अपनी उपेक्षा और पुनर्निर्माण के मुद्दों को लेकर चुनाव बहिष्कार का एलान किया है.

बिहार में दशकों से जातिगत समीकरणों और बाहुबलियों का बोलबाला रहा है. लेकिन इस बार बाहुबलियों पर अदालती नकेल है तो मुख्यमंत्री नीतीश कुमार का विकास और सुशासन हाथ धोकर पड़ा है. इस बार कई बड़े और जाने-माने नाम नेपथ्य में हैं. इनमें पप्पू यादव और आनंद मोहन मुख्य रूप से शामिल हैं. दोनों सज़ायाफ्ता हैं और उनके चुनाव लड़ने पर अदालत ने पाबंदी लगा रखी है. इसलिए उपस्थिति दर्ज कराने के लिए पप्पू यादव ने पत्नी रंजीता रंजन और पूर्णिया से मां शांतिप्रिया को चुनाव मैदान में उतारा है. ग़ौरतलब है कि पप्पू यादव और आनंद मोहन दोनों ही बाहुबली नेता अब कांग्रेस में शामिल हो चुके हैं. पप्पू यादव के कांग्रेस में चले जाने का नुक़सान राजद को सबसे अधिक हुआ है. इसलिए कि क्षेत्र में राजद सुप्रीमो लालू प्रसाद के लिए पप्पू यादव बड़ी ताक़त थे. कांग्रेस इससे काफी खुश है. मृतप्राय हो गई कांग्रेस में नए जीवन का संचार सब जगह महसूसा जा रहा है.

वैसे बाढ़ प्रभावित कोसी इलाक़े में नए परिसीमन ने भी नए समीकरण बना दिए हैं. ब्राह्मण बहुल सहरसा संसदीय क्षेत्र को खंड-खंड में बांटकर मधेपुरा, सुपौल और खगड़िया लोकसभा क्षेत्र में शामिल कर दिया गया है. सहरसा का बड़ा हिस्सा मधेपुरा में मिला दिया गया है. ग़ौरतलब है कि बाढ़ से सबसे अधिक प्रभावित सुपौल के बाद मधेपुरा का ही स्थान था. इसी तरह पूर्णिया लोकसभा सीट से बायसी अनुमंडल को काटकर किशनगंज लोकसभा सीट में मिला दिया गया है. बायसी के मुस्लिम बहुल इलाक़े में बाहुबली नेता पप्पू यादव की अच्छी पकड़ रही है. इसके कट जाने से पूर्णिया से बतौर निर्दलीय और कांग्रेस समर्थित पप्पू यादव की मां शांतिप्रिय देवी को नुक़सान उठाना पड़ सकता है. जबकि बायसी के मतदाता अबकी किशनगंज से जद-यू प्रत्याशी सैयद महमूद अशरफ़ के पक्ष में अधिक लग रहे हैं. यही कारण है कि केंद्रीय मंत्री और राजद-लोजपा के प्रत्याशी तस्लुमुद्दीन इस बार कड़ी चुनौतियों का सामना कर रहे हैं. कटिहार के कोढ़ा प्रखंड को पूर्णिया लोकसभा क्षेत्र में मिलाया गया है. यह प्रखंड भाजपा समर्थक माना जाता रहा है. इसलिए इसका सबसे अधिक लाभ पूर्णिया से भाजपा प्रत्याशी उदय सिंह उर्फ पप्पू सिंह को मिलना तय है.

कोसी क्षेत्र में सबसे चर्चित चुनाव मधेपुरा में हो रहा है. इसलिए कि यहां से जनता दल (यू) के राष्ट्रीय अध्यक्ष शरद यादव चुनावी मैदान में हैं. उनका मुकाबला कांग्रेस के डॉ. तारानंद सादा से है. अगर 13 साल बाद कांग्रेस ने प्रत्याशी नहीं उतारा होता, शरद यादव के लिए लगभग वाकओवर जैसी स्थिति ही रहती.

सुपौल लोकसभा सीट से जद-यू प्रत्याशी विश्वमोहन कुमार को राघोपुर विधानसभा क्षेत्र से पार्टी के विधायक नीरज कुमार बबलू के कामों का पूरा लाभ मिल रहा है. इसलिए कि उन्होंने बाढ़ पीड़ितों के बीच जी-जान से काम किया था. बाढ़ में वह खुद भी घायल हो गए थे, बल्कि मरते-मरते बचे थे. लोकसभा के लिए टिकट की दौड़ में वह भी थे, लेकिन पिछड़ गए. इससे वह नाराज़ भी काफी थे, लेकिन अब वह जद-यू प्रत्याशी विश्वमोहन कुमार के समर्थन में खुल कर सामने आ गए हैं. हालांकि क्षेत्र में भरपूर काम करने के बावज़ूद चुनावी समीकरणों को लेकर वह भी आशंकित हैं. कैसे? इसलिए कि यादव गोलबंद हो रहे हैं, जातीय समीकरण हावी हो रहा है. यानी पहले जाति, तब विकास.

बिहार में दशकों से जातिगत समीकरणों और बाहुबलियों का बोलबाला रहा है. लेकिन इस बार बाहुबलियों पर अदालती नकेल है तो मुख्यमंत्री नीतीश कुमार का विकास और सुशासन हाथ धोकर पड़ा है. इस बार कई बड़े और जाने-माने नाम नेपथ्य में हैं.

इन परिस्थितियों में सबसे बड़ी परीक्षा मुख्यमंत्री नीतीश कुमार को देनी पड़ रही है. क्षेत्र में उनके पास कोई जातीय समीकरण नहीं है. उन पर टिकट बंटवारे में ब्राह्मणों की उपेक्षा का आरोप अलग लग रहा है. नीतीश कुमार क्षेत्र में विकास और सुशासन पर सबसे अधिक जोर दे रहे हैं. अपनी सभाओं में वह कहते भी हैं कि विकास और सुशासन का मेहनताना मांगने आया हूं. ऐसे में बाढ़ के दुर्दिनों में मेगा रिलीफ कैंपों में पुनर्वास की सफल व्यवस्था, विकास और सुशासन की बदौलत अगर नीतीश कुमार सफल हो जाते हैं तो इतिहास उन्हें जातिगत समीकरणों में सेंध लगाने वाले नेता के रूप में याद करेगा.

अभेदानंद

feedback.chauthiduniya@gmail.com

लहूलुहान रहा पहले चरण का चुनाव

नक्सलियों ने बस्तर और कांकेर संसदीय इलाकों में नौ जगहों पर इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनें लूट लीं. राजानांदगांव जिले में नक्सलियों ने मतदानकर्मियों को ले जा रही जीप को उड़ा दिया.

रीतिका सोनाली

अपनी घोषणा के अनुरूप ही नक्सलियों ने पहले चरण के मतदान को जमकर प्रभावित किया. पंद्रहवीं लोकसभा के लिए पहले चरण के चुनाव को उन्होंने लहूलुहान कर दिया. नक्सली हिंसा से सबसे अधिक प्रभावित उड़ीसा, झारखंड और छत्तीसगढ़ रहे. वैसे छिटपुट हिंसा आंध्र प्रदेश में भी हुई. मतदान के दौरान नक्सलियों के हमले में 21 लोगों की मृत्यु हो गई. कई गंभीर रूप से घायल हो गए.

छत्तीसगढ़ के कुल 16 जिलों में से आठ- बस्तर, दंतेवाड़ा, राजनांदगांव, सरगुजा, कवर्धा, जशपुरनगर और कोरिया नक्सल प्रभावी इलाक़े हैं. हमेशा से दीवारों पर लिखे गए नारों, पोस्टरों और पर्चों के जरिए जनता से चुनाव का बहिष्कार करने की मांग करने वाले माओवादियों ने इस बार बस्तर के अंदरूनी इलाक़ों में हज़ारों ग्रामीणों की सभा कर चुनाव बॉयकॉट की घोषणा की थी. नक्सलियों का कहना था कि वर्तमान लोकतांत्रिक व्यवस्था में जनता का कुछ भला नहीं हो रहा है. चुनाव के बाद जनता का शोषण और बढ़ेगा, इसलिए वोट नहीं दिया जाना चाहिए.

बहरहाल, नक्सलियों ने बस्तर और कांकेर संसदीय इलाक़ों में नौ जगहों पर इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनें लूट लीं. राजानांदगांव ज़िले में नक्सलियों ने मतदानकर्मियों को ले जा रही जीप को उड़ा दिया. इससे पांच कर्मचारी मारे गए और दो घायल हो गए. दंतेवाड़ा और नारायणपुर में मतदान केंद्रों को आग के हवाले कर दिया गया. वहां नक्सलियों और सुरक्षा बलों के बीच हुई गोलाबारी में सीआरपीएफ के दो जवान शहीद हो गए और पांच घायल हो गए. इसी ज़िले में बारूदी सुरंग फटने से भी तीन जवान शहीद हो गए. मुठभेड़ मारूकी में भी हुई, जहां दो जवान शहीद हो गए. बस्तर में 14 इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनें लूटी गईं.

सूत्रों के अनुसार पुलिसकर्मियों का एक बड़ा तबका नक्सल प्रभावी इलाक़ों में ड्यूटी करने से इंकार करता रहा है. पिछले कुछ वर्षों में समस्या के समाधान के लिए प्रदेश 15 लैंडमाइन प्रतिरोधी गाड़ियां मंगा चुका है. रात में दिखाई देने वाले विशेष नाइट विजन गॉगल्स भी ख़रीदे गए हैं. राज्य में चुनाव शांतिपूर्ण कराने के लिए एक विशेष रणनीति बनाई गई थी. इसके तहत सीआरपीएफ और गुजरात पुलिस के बाद नगालैंड पुलिस के जवान भी तैनात किए गए थे. बावजूद इसके, राज्य में मतदान पर खून के छींटे पड़ ही गए.

उधर, झारखंड के लातेहार जिले में मतदान से ऐन पहले नक्सलियों ने सीमा सुरक्षा बल के जवानों को ले जा रही बस को बारूदी सुरंग से उड़ा दिया. इससे पांच जवान शहीद हो गए. इस घटना में दो नागरिकों की भी मौत हो गई. वैसे झारखंड में चुनाव की घोषणा के बाद से ही ग्रामीण अंचल के स्कूलों और दूसरी सरकारी इमारतों पर हमले शुरू कर दिए गए थे. इसलिए कि सुरक्षा बलों को तैनात करने के लिए सुरक्षित ठिकाने न मिल पाएं. पिछले समय की वारदातों पर गौर करें तो यहां नक्सली चुनाव में वोट डालने वालों के प्रति अपना विरोध उन लोगों का अंगूठा और हाथ काटकर दर्ज कराते रहे हैं. पलामू जिले के विष्णुगढ़ इलाक़े के रतनाग में पुलिसकर्मियों के एक कैंप में चुनाव ड्यूटी पर गए करीब सौ पुलिसकर्मियों को माओवादीयों ने घेरकर भीषण गोलाबारी की. वैसे मतदान की पूर्वसंध्या पर लातेहार जिले में माओवादियों ने चुनाव डयूटी पर जा रहे केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल के जवानों पर हमला किया, जिसमें ड्राइवर समेत पांच लोग मारे गए और पांच घायल हो गए. गौरतलब है कि वर्ष 2000 में बिहार से अलग होकर जब झारखंड राज्य बना था, तब मात्र सात ज़िले ही नक्सल प्रभावित थे. इनमें धनबाद, गिरीडीह, कोडरमा, हजारीबाग और चतरा थे. सरकारी आंकड़ों के मुताबिक़ आज ऐसे ज़िलों की संख्या बढ़कर 18 हो गई है. हालांकि पिछली बार के विधानसभा चुनाव में सुरक्षाकर्मियों को लाने-ले जाने के लिए हेलीकॉप्टर की व्यवस्था की गई थी. इस बार इसका अभाव दिखा.

बिहार में पहले दौर में जिन क्षेत्रों में वोट पड़े उनमें गया में नक्सली हिंसा के वारदात हुए. गया ज़िले के सिंदपुर में एक होमगार्ड जवान और जिला सैन्य बल के एक जवान की हत्या कर दी गई. यहां से पुलिस की चार राइफलें भी लूटी गईं. ऐसी घटनाओं को रोकने के लिए संवेदनशील क्षेत्रों में बारूदी सुरंगें हटाने के लिए 50 दल और कई हेलीकॉप्टरों का इस्तेमाल किया गया था. इसका लाभ भी मिला. कई आशंकित हमले टल गए. उड़ीसा के मलकानगिरी जिले में नक्सलियों ने तीन मतदान केंद्रों को निशाना बनाया. नक्सलियों ने चित्रकोंडा में मतदान कर्मियों के हाथ बांधने के बाद दो ईवीएम और एक वाहन को आग के हवाले कर दिया. मतदान कर्मियों से लूटपाट भी की. इसी तरह की वारदातों को सालीमारीकोंडा और कालीमेला मतदान केंद्रों पर भी अंजाम दिया गया. मतदान के बाद पोलिंग पार्टियों के लौटते वक्त रात में भी नक्सलियों ने हमला बोला. मतदान से पहले उड़ीसा के कोरापुट ज़िले के सार्वजनिक क्षेत्र की बॉक्साइट खदान-नाल्को-में सुरक्षाबलों के कैंप पर हमले भी हुए. इसमें केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल (सीआरपीएफ) के 11 जवान शहीद हो गए, जबकि घंटों चली मुठभेड़ में चार नक्सली मारे गए. वैसे वहां से नक्सली भारी मात्रा में विस्फोटक ले जाने में कामयाब रहे.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

बड़े उलटफेर की ताक में छोटे दल

पावस नीर

लोकसभा तक की बाधादौड़ चालू है, चाहे भाजपा हो या कांग्रेस सब भाग रहे हैं, तीसरी टीम भी रफ़्तार पकड़ रही है. जो सबसे आगे हैं उनमें सरकार बनाने के लिए खींचतान है, प्रधानमंत्री बनने की होड़ है. हालांकि इन बड़े खिलाड़ियों के अलावा कुछ और भी हैं जो इस रेस का हिस्सा हैं. इनके सपने इतने बड़े नहीं हैं. इनका मक़सद जीतने से ज़्यादा बड़े खिलाड़ियों को हराना है. लेकिन इनका असर कम नहीं है. ये बड़ी पार्टियों का खेल बिगाड़ सकते हैं, उनकी रफ़्तार में लंगड़ी लगा सकते हैं.

कई ऐसी छोटी पार्टियां हैं जो इस बार चुनावों में अपना पूरा ज़ोर लगा रही हैं. इन सबका अपना एक वोट बैंक है जो बड़े दलों का समीकरण बिगाड़ सकता है. गठबंधन के इस दौर में जब स्थानीय मसले राष्ट्रीय मुद्दों पर भारी पड़ रहे हैं ये छोटे दल बड़ा खेल दिखा सकते हैं.

उत्तरप्रदेश में अपना दल, इंडियन जस्टिस पार्टी और अजीत सिंह की राष्ट्रीय लोकदल ऐसी ही पार्टियां हैं जो समीकरण बिगाड़ने के खेल में माहिर हैं. उदित राज की जस्टिस पार्टी उन दलितों को अपनी ओर खींचने की जुगत में है जो मायावती से नाराज़ हैं. जिन सीटों पर मुक़ाबला कांटे का है वहां ये वोट बड़ी भूमिका निभा सकते हैं. पार्टी पूरे देश में 80 सीटों पर उम्मीदवार खड़े कर रही है जिसमें उत्तरप्रदेश में 23 सीटें हैं. प्रदेश के क़रीब एक फीसदी वोटर इनके साथ हैं जो आख़िरी नतीज़े पर बड़ा असर डाल सकते हैं. अजीत सिंह की पार्टी अभी भाजपा के साथ है. पश्चिमी उत्तर प्रदेश में उनकी पार्टी किसानों के वोटों पर कब्ज़ा करेगी, लेकिन असली कैंची समाजवादी पार्टी के वोटों पर चलेगी. अपना दल का कोई बड़ा उम्मीदवार भले न हो लेकिन पूर्वी उत्तरप्रदेश की कई सीटों पर इनके उम्मीदवार बड़े उम्मीदवारों के लिए मुश्किल पैदा करने वाले हैं. पिछले विधानसभा चुनावों में इसके प्रत्याशियों ने गंगापुर, खोंसला जैसी सीटों पर बेहतर प्रदर्शन किया था. इस बार चार सीटों पर इसने उम्मीदवार खड़े किए हैं. अपना दल इन सीटों पर सपा और बसपा दोनों के समीकरण बिगाड़ सकता है.

अजीत सिंह

बाबूलाल मरांडी

रामदास अठावले

महाराष्ट्र में एनसीपी–कांग्रेस और भाजपा–शिवसेना के बीच मुक़ाबला है लेकिन राज ठाकरे इस मुक़ाबले में तराजू का पलड़ा एक ओर झुका सकते हैं. राज की महाराष्ट्र नवनिर्माण सेना शिवसेना के वोटबैंक में सेंध लगाती दिख रही है. उधर रिपब्लिकन पार्टी ऑफ़ इंडिया के कई धड़े इस चुनावी मैदान में हैं. रामदास अठावले का धड़ा तो यूपीए के साथ है पर प्रकाश अंबेडकर और दूसरे नेताओं के नेतृत्व वाले धड़े अपना पाला तय करने में जुटे हैं. इन नेताओं का प्रदेश के दलित मतदाताओं के बीच एक बड़ा जनाधार है जो कई जगहों पर बड़े महत्वपूर्ण साबित हो सकते हैं. पिछली लोकसभा में इन पाटियों के पास क़रीब चार लाख का वोट बैंक था.

सबसे रोचक बदलाव आंध्र की राजनीति में आता दिख रहा है. यहां अभिनेता से नेता बने चिरंजीवी की ताक़त की थाह लगाना बड़े दलों को अबूझ पहेली लग रहा है. चिरंजीवी बड़े सितारे हैं और आंध्र में उनके समर्थक चुनावी परिणामों पर बड़ा असर डालने वाले हैं.

तमिलनाडु में वाइको की पीएमके पिछली पांच केंद्र सरकारों का हिस्सा रही है, इस बार वह जयललिता के साथ हैं. श्रीलंकाई तमिलों पर अत्याचार का मुद्दा इस बार वाइको का हथियार है अब इसका असर कितना पड़ेगा यह परिणाम ही बताएंगे. वाइको के पास क़रीब 20 लाख तमिल मतदाता हैं. वहीं अभिनेता विजयकांत की नई पार्टी भी मतदाताओं के ध्रुवीकरण पर असर डालने वाली हैं.

महाराष्ट्र में एनसीपी–कांग्रेस और भाजपा–शिवसेना के बीच मुकाबला है लेकिन राज ठाकरे इस मुकाबले में तराजू का पलड़ा एक ओर झुका सकते हैं. राज की महाराष्ट्र नवनिर्माण सेना शिवसेना के वोटबैंक में सेंध लगाती दिख रही है. उधर रिपब्लिकन पार्टी ऑफ़ इंडिया के कई धड़े इस चुनावी मैदान में हैं.

झारखंड में यूपीए और एनडीए के बीच के मुक़ाबले में बाबूलाल मरांडी की झारखंड विकास पार्टी कहीं–कहीं भाजपा को परेशान कर रही है. बाबूलाल मरांडी पिछली लोकसभा में भाजपा के अकेले सांसद थे, अब वह भाजपा को नुक़सान पहुंचाने की तैयारी कर रहे हैं. उनकी जीत और हार दोनों भाजपा के लिए परेशानी का ही सबब बनेंगी. वैसे यूपीए भी यहां छोटे खिलाड़ियों से परेशान है. राज्य की यूपीए सरकार में मंत्री रहे एनोस एक्का की झारखंड पार्टी कोई सीट भले न जीते लेकिन झारखंड में यूपीए के वोट ज़रूर काट सकती है. तमाड़ उपचुनाव में शिबू सोरेन को अपनी पार्टी के उम्मीदवार से हरवाकर उन्होंने अपनी ताक़त दिखा दी है. इनके अलावा हरियाणा की हरियाणा विकास कांग्रेस, मणिपुर से मणिपुर पीपल्स पार्टी, बंगाल में फॉरवर्ड ब्लॉक, अरुणाचल कांग्रेस अपने–अपने यहां इतना जनाधार रखती हैं जिससे चुनावी गणित बदल सकता है. ऐसी तमाम पार्टियां हैं जो संख्या–बल और ताक़त में छोटी हैं लेकिन अपन इलाकों में परिणामों पर बड़ा असर डालने वाली हैं. ये पार्टियां स्थानीय मुद्दों पर चुनाव लड़ रही हैं लेकिन राष्ट्रीय राजनीति में भी इनकी गूंज सुनाई देने वाली है. चुनाव के पहले गठबंधन की बात हो या चुनाव बाद सरकार बनाने की क़वायद की इनकी ज़रूरत सभी बड़े मोर्चों को है. ऐसे में 15वीं लोकसभा में ये छोटी पार्टियां कमाल दिखा सकतीं हैं.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

मुख्यमंत्री ओक्रम इबोबी (दाएं) के साथ मत्स्य पालन मंत्री मोहम्मद अलाउद्दीन खान, एमपीसीसी के अध्यक्ष गाइखांगम और थांगसो बाइते.

मणिपुर में विकास है मुद्दा

एस. बिजेन सिंह

मणिपुर में लोकसभा की केवल दो सीटें हैं. फिर भी यहां चुनाव दो चरणों में हो रहा है. 16 अप्रैल को पहले चरण में आउटर मणिपुर संसदीय सीट का चुनाव हो गया. लगभग आठ लाख 70 हज़ार मतदाताओं ने वोट डाले. चुनाव शांतिपूर्ण रहा. अब दूसरे चरण में 22 अप्रैल को दूसरी सीट अंदरी (इनर) मणिपुर के लिए मतदान होगा. पहले चरण के चुनाव के शांतिपूर्ण तरीके से संपन्न हो जाने के बाद दूसरे चरण में भी निष्पक्ष और शांतिपूर्ण चुनाव कराने के लिए सुरक्षा के पुख्ता इंतज़ाम करने के आदेश जारी किए गए हैं.

30 लाख की आबादी वाले इस प्रदेश में दो संसदीय सीटें हैं–इनर और आउटर. आउटर के लिए पांच और इनर के लिए सात उम्मीदवार मैदान में हैं.

इनर के सात उम्मीदवारों में निवर्तमान सांसद डॉ. टीएच मैन्य (कांग्रेस), टीएच चाउबा (मणिपुर पीपल्स पार्टी), डॉ. एम नर (सीपीआई), डब्ल्यू निपामचा (भाजपा), एल क्षेत्रानी (बसपा) और दो निर्दलीय प्रत्याशी अब्दुलरहमान व एन होमेंद्रो हैं. उल्लेखनीय है कि इनर क्षेत्र के निवर्तमान सांसद डॉ. मैन्य इंफाल कॉलेज में गणित के प्राध्यापक रह चुके हैं. वह 2002 में कांग्रेस में शामिल हुए. सांसद बनने से पहले वह राज्य सरकार में शिक्षा मंत्री थे.

आउटर मणिपुर सीट पर मुख्य मुक़ाबला इंडियन नेशनल कांग्रेस के थांसो वाइटे और निवर्तमान सांसद व पीपल्स डेमोक्रेटिक एलायंस के नेता मनि चरानमै के बीच है. वैसे एनसीपी के एलबी सोना, बीजेपी के लोली अदानि व राजद के चामखोंगम हाउकिप भी चुनावी मैदान में हैं.

बहरहाल, विकास की दौड़ में पिछड़े मणिपुर को अपने सांसदों से काफी उम्मीदें हैं. लोगों को शिकायत है कि अब तक जो भी सांसद बने, उन्होंने सांसद निधि पर ही अधिक ध्यान दिया. जनता इस बात से अधिक नाराज़ है कि केंद्र और राज्य दोनों जगहों पर कांग्रेस की सरकारों के रहते हुए भी विकास का कोई काम नहीं हो रहा है. लोग अपने मुख्यमंत्री ओक्रम इबोबी से भी काफी खफ़ा हैं. मुख्यमंत्री से यह नाराज़गी लोकसभा चुनाव में कांग्रेस को भारी भी पड़ सकती है. वैसे हैरानी की बात यह है कि आउटर और इनर क्षेत्रों के मुद्दे स्थानीय होते हुए भी समान नहीं हैं.

जहां तक चुनाव प्रचार की बात है, तो यहां भाकपा नेता एबी वर्धन भी आ चुके हैं. उन्होंने पार्टी के उम्मीदवार डॉ. नर सिंह के लिए जमकर प्रचार किया. कांग्रेस के युवा नेता राहुल गांधी भी चुड़ाचांदपुर में आए थे. एनसीपी प्रत्याशी एलबी सोना के लिए पूर्व लोकसभा अध्यक्ष पीए संगमा ने भी चुड़ाचांदपुर में सभा की. जीत के दावे सभी दल और प्रत्याशी कर रहे हैं. फिर भी बहुकोणीय मुक़ाबले में ऊंट किस करवट बैठेगा, यह कहना फिलहाल कठिन है.

bijen.chauthiduniya@gmail.com

विकास की दौड़ में पिछड़े मणिपुर को अपने सांसदों से काफी उम्मीदें हैं. लोगों को शिकायत है कि अब तक जो भी सांसद बने, उन्होंने सांसद निधि पर ही अधिक ध्यान दिया. जनता इस बात से अधिक नाराज़ है कि केंद्र और राज्य दोनों जगहों पर कांग्रेस की सरकारों के रहते हुए भी विकास का कोई काम नहीं हो रहा है. लोग अपने मुख्यमंत्री ओक्रम इबोबी से भी काफी खफ़ा हैं.

इंफाल में चुनावी रैली निकालते हुए सीपीआई के कार्यकर्ता .

इंफाल में चुनाव के दौरान वोट डालतीं महिलाएं.

दुनिया

घरों में घुसकर गालियां देता टीवी

सचिन सिंह

अभी हाल में एक खबर पढ़ने को मिली. अक्षय कुमार और करीना कपूर वाली फिल्म–कमबख्त इश्क–को सेंसर बोर्ड ने ए सर्टिफिकेट दिया है. इसलिए कि अक्षय कुमार ने करीना को फ़िल्म में कुतिया और करीना ने अक्षय को कुत्ता कहा है.

रात को घर पहुंचा तो मैंने टीवी पर एक शो देखा. एमटीवी का रोडीज़. शो में जो कुछ दिखाया जा रहा था, वह काफी हैरान करने वाला था. जब मैंने वह शो देखा, तब उस दिन का एपिसोड ख़त्म होने के कगार पर था. चंद पलों बाद किसी एक प्रतियोगी को बाहर होना था. प्रतियोगियों के वोट से एक लड़की बाहर हो गई. लेकिन तभी इस लड़की की एक दूसरी लड़की से ज़ुबानी जंग छिड़ गई. इसमें दोनों लड़कियां एक–दूसरे की इज़्ज़त तार–तार करने पर आमादा थीं. दोनों की भाषा और लांछन लगाने का स्तर देखकर आंखें फटी की फटी रह गईं. पहली दूसरी को वैश्या बता रही थी. जवाब में पहली से दूसरी कपड़े उतार कर चेक करने को कह रही थी कि वह लड़की है या नहीं. बात यहीं खत्म नहीं हुई. दोनों एक–दूसरे को नीचा दिखाने के लिए चरित्रहनन की हदें पार करती चली गईं. पहली ने कहा कि दूसरी कितने बार अपने ब्वाय फ्रैंड के साथ सो चुकी है. दूसरी कहां पीछे रहने वाली थी. उसने पहली को याद दिलाया कि वह कितने लोगों के साथ सो चुकी है. दोनों ने ऐसे–ऐसे शब्दों का इस्तेमाल किया, जिन्हें लिखा नहीं जा सकता. दो अलग–अलग मापदंड. एक तरफ कुत्ता और कुतिया शब्दों के कारण फिल्म वयस्कों की मानी गई, जिसे बच्चे नहीं देख सकते. दूसरी तरफ, जिन्हें वयस्क भी घर–परिवार में नहीं बोल सकते, ऐसी गालियां टीवी के ज़रिए बच्चों तक पहुंचाई जा रही हैं.

बहरहाल, टीवी देखने के बाद मैंने रोडीज़ के बारे में अपने दोस्त से बात की. उसने बताया कि इस रिएलिटी शो में गालियों की भरमार रहती है. बिना गाली के कोई रोडीज़ नहीं बन सकता है. कहने को गालियां बोलते वक्त बीप लगा दिया जाता है, लेकिन ये बीप इस तरह लगाया जाता है कि बच्चे भी समझ जाएं कि कौन–सी गाली बकी जा रही है.

अगर यह दलील दी जाए कि गालियां तो समाज का सच होती है और गालियां कहां नहीं दी जाती, तो सवाल उठता है कि क्या कहीं भी गालियों को अच्छी नज़र से देखा जाता है ? कितने पढ़े–लिखे लोग ऐसे हैं जो अपनी मां–बहन के सामने गाल–गलौज करते हैं? और फिर यह नहीं भूलना चाहिए कि मीडिया समाज को सिर्फ आईना ही नहीं दिखाता है बल्कि रास्ता भी दिखाता है.

एडिटिंग से बीप का इस्तेमाल करके प्रतियोगियों को खुलेआम गाली बकने की छूट मिल जाती है. और, जब लगातार गालियों की बौछार होती है, तो कई बार सब सुनाई देता है.

पता चला कि जब शो के लिए प्रतियोगी चुने जा रहे थे, तब उनके चयन का एक आधार गाली थी. यानी जिस लड़की ने जितनी गंदी गाली दी, उसे उतने अंक मिले. प्रतियोगियों के साथ चयन में तमाम बदतमीज़ियां हुईं. उन्हें जलील किया गया. यही नहीं, शो में प्रतिभागी ऐसे–ऐसे शब्दों का इस्तेमाल भी कर जाते हैं, जिन्हें आधे हिंदुस्तानी पतियों ने अपनी पत्नियों से भी नहीं कहा होगा.

मैंने यह पता लगाने की कोशिश की कि ऐसे में यह शो चल कैसे रहा है, इसे अब तक रोका क्यों नहीं गया, तो मिले जवाब ने फिर मुझे नाखून चबाने पर मज़बूर कर दिया. एक चैनल बिंदास तो अपनी बिंदास छवि झाड़ने के लिए गालियों की झड़ी लगा देता है. कार्यक्रम चाहे जैसा भी हो. हिंदी में डब अंग्रेज़ी फिल्में हों या फिर महिलाओं की कुश्ती. मजाल है कि बिना पीं–पीं (यानी गालियों) के चल जाए. ऐसे ही एक सीरियल–चल यार चिल मार–में एक पात्र को बात बात पर बहन की गाली देते देखा गया था. जब रिएलिटी शो बिग बॉस सीज़न वन आया था, तब उसमें प्रतिभागियों को गाली न देने की हिदायत दी गई थी, लेकिन कुछ प्रतियोगी तब भी गाली देते थे. फिर भी उसका स्तर इतना घटिया और उसकी बारंबारता इतनी नहीं थी जितनी रोडीज़ की है.

दरअसल ये शो और ऐसे चैनल दिमाग़ी दिवालियापन के शिकार लोगों की पैदाइश हैं. वे दर्शकों को कुछ नया नहीं दे सकते, इसलिए गाली–गलौज और बेडरूम की प्राइवेट बातें प्रतियोगियों के ज़रिए दर्शकों तक पहुंचा रहे हैं. ताकि उनके शो को एक पहचान मिल सके और इससे पैदा होने वाली सनसनी दर्शक बटोर सकें. वैसे इसके लिए वे मज़बूर भी हैं. क्या करें, आख़िर आइडिया के स्तर पर कंगाल जो हैं. ऐसे शो बनाने वालों की दलील हो सकती है कि अगर आपको नहीं देखना तो रिमोट का इस्तेमाल कीजिए. मत देखिए. लेकिन सवाल है कि क्या मैं नहीं देखूंगा तो कच्ची उम्र के बच्चे भी इसे नहीं देखेंगे? जब कुत्ते और कुतिया के संवाद वाली फ़िल्म को उनके देखने लायक नहीं मानी जाती है, तो फिर गालियों वाले प्रोग्राम क्यों उन तक पहुंचाए जा रहे हैं? क्या किसी मां–बाप के लिए संभव है कि वे हमेशा अपने बच्चों को ऐसे कार्यक्रमों से दूर रख सकें? और, दूर रखने का रास्ता क्या होगा? क्या चौबीसो घंटों बच्चों पर नज़र रखी जाए या फिर उन पर नज़र रखने के लिए नौकर रखा जाए?

अगर यह दलील दी जाए कि गालियां तो समाज का सच होती हैं और गालियां कहां नहीं दी जाती, तो सवाल उठता है कि क्या कहीं भी गालियों को अच्छी नज़र से देखा जाता है ? कितने पढ़े–लिखे लोग ऐसे हैं जो अपनी मां–बहन के सामने गाल– गलौज करते हैं? और फिर यह नहीं भूलना चाहिए कि मीडिया समाज को सिर्फ आईना ही नहीं दिखाता है बल्कि रास्ता भी दिखाता है. बच्चे ही नहीं, बड़े भी मीडिया में दिखाई जाने वाली बातों का अनुसरण करते हैं. मीडिया से काफी कुछ सीखते हैं. कहना ही होगा कि इस तरह के शो और सीरियलों के कारण ही घरों में भी गालियां सुनी जाने लगी हैं. मां–बाप के सामने दोहरी परेशानी है. एक तो बच्चों की ऐसी लत कैसे छुड़ाई जाए, दूसरे यह कि टीवी युग के बच्चे उनकी प्रतिक्रिया को पिछड़ापन न कह दें. ऐसे कार्यक्रमों के लिए जितने दोषी इसके निर्माता हैं, उतनी ही जवाबदेह सरकार भी है. आख़िर इन सबको रोकने की ज़िम्मेदारी किसकी है ? इसके लिए हमारा बुद्धिजीवी तबका भी कम दोषी नहीं है. छोटी–छोटी बात पर ख़बरिया चैनलों को कोसने वालों की नज़र इस तरफ क्यों नहीं गई? इसके खिलाफ कोई आवाज़ क्यों नहीं उठाई जा रही है ? क्या उनकी ज़िम्मेदारियां केवल खबरिया चैनलों को कोसने तक ही सीमित हैं ? कहना ही होगा कि आज़ादी और अभिव्यक्ति के नाम पर किसी को घर में घुस कर गाली–गलौज सिखाने की इजाज़त नहीं दी जा सकती.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

आडवाणी के अपमान को भूलने की कोशिश

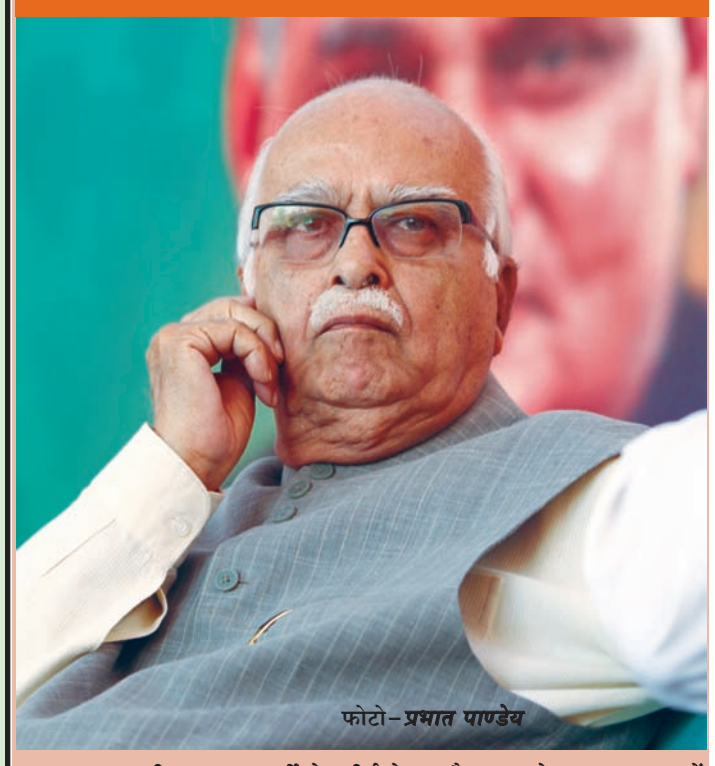

फोटो– *प्रभात पाण्डेय*

भारतीय जनता पार्टी के शीर्ष नेता और इस लोकसभा चुनाव में प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार लालकृष्ण आडवाणी ने कभी कल्पना भी नहीं की होगी कि किसी भाजपा शासित राज्य में ही उनपर चप्पल फेंकने जैसी अपमानजनक घटना भी घट सकती है. वह भी भाजपा के कार्यकर्ता के द्वारा ही. लेकिन मध्यप्रदेश के कटनी में यह घटना घटी और आडवाणी ने शांत रहकर इस अपमान को सहा. मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान और दूसरे भाजपा नेताओं के सामने सब कुछ हुआ. बाद में झेंप मिटाते हुए भाजपा नेताओं ने सफाई दी कि आडवाणी की ओर फेंकी गई खड़ाऊं (लकड़ी की चप्पल) उन्हें लगी नहीं, बल्कि थोड़ी दूरी पर मंच के पास जाकर गिरी. 16 अप्रैल को कटनी शहर में घटी इस घटना के कुछ समय बाद आडवाणी को चुनाव प्रचार अभियान के दौरान भोपाल आना था. कटनी और भोपाल में मीडियाकर्मियों ने आडवाणी और भाजपा नेताओं से इस घटना पर प्रतिक्रिया लेनी चाही, लेकिन आडवाणी ने मुंह नहीं खोला. लेकिन मन ही मन आडवाणी व्यथित, दुखी और क्रोधित थे. आडवाणी में वित्त मंत्री पी.चिदंबरम की तरह अपराधी के प्रति न तो कोई उदार भाव था और न ही वह उस अभद्र भाजपा कार्यकर्ता को क्षमा करने के लिए तैयार थे. आडवाणी को बताया गया कि घटना के तुरंत बाद पुलिस ने उन पर खड़ाऊं प्रहार करने वाले पावस अग्रवाल नामक व्यक्ति को हिरासत में ले लिया है और अब उस पर कानूनी कार्यवाही की जाएगी. बाद में भोपाल में आडवाणी को पार्टी के नेता उमाशंकर गुप्ता ने कुछ कागजी प्रमाण दिखाते हुए बताया कि पावस अग्रवाल मानसिक रूप से विक्षिप्त है और उसका भाजपा से कोई संबंध नहीं है. पहले जरूर भाजपा में रहा है, लेकिन बाद में वह अलग हो गया था. सबूत के तौर पर एक डॉक्टर का पर्चा दिखाते हुए बताया गया कि पावस के मानसिक रोग का इलाज़ चल रहा है.

लेकिन, जब कटनी में पावस अग्रवाल को जानने वालों से जानकारी ली गई, तो पता चला कि वह न तो पागल हैं और न ही उनके पागलपन का इलाज़ चल रहा है. लगभग 45 वर्ष की आयु के पावस अग्रवाल एक प्रतिष्ठित व्यापारी हैं. उनके पास केरोसिन तेल की एजेंसी है और वह प्रापर्टी डीलिंग का काम भी करते हैं. इस प्रकार वह वर्ष में लगभग दो से ढाई करोड़ रुपये का कारोबार करते हैं. सोचने वाली बात है कि व्यापार से अच्छी कमाई कर लेने वाला व्यक्ति मानसिक रूप से विक्षिप्त या बीमार कैसे हो सकता है? यह भी सही है कि मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान, जब युवा मोर्चा के अध्यक्ष थे तब उन्होंने ही पावस को कटनी शहर का उपाध्यक्ष बनाया था और बाद में वह मोर्चे का जिलाध्यक्ष भी बने. उन्होंने राम मंदिर आंदोलन के दौरान कम उम्र में ही सक्रिय भूमिका अदा की थी. भाजपा के प्रति पूरी तरह समर्पित पावस अग्रवाल शरीर से मामूली विकलांग हैं.

सूत्रों के अनुसार, कटनी में आडवाणी की सभा के लिए फॉरेस्टर ग्लेग्राइन्ड पर तैयारियां पूरी होने के बाद रात्रि में भाजपा कार्यकर्ताओं ने दावत की थी. उसमें कई ने शराब भी पी थी. शराब पीने वालों में पावस अग्रवाल भी थे और तभी उन्होंने कहा था कि वह आडवाणी जी के आगमन पर कटनी के महापौर संदीप जयसवाल को चप्पल से मारेंगे और यदि उनकी नहीं सुनी गई तो, आडवाणी जी पर भी वह चप्पल फेंकेंगे. लेकिन किसी भी भाजपा कार्यकर्ता ने पावस की इस चेतावनी पर ध्यान नहीं दिया.

दूसरे दिन सभा शुरू होने से लगभग एक घंटे पहले ही पावस वीवीआईपी यानी अतिविशिष्ट व्यक्ति के प्रवेश पत्र के आधार पर मंच के समीप बैठ गए. यह अतिविशिष्ट व्यक्ति का प्रवेशपत्र उन्हें भाजपा के स्थानीय नेताओं की सिफाशि से ही ज़िला प्रशासन ने दिया था. उनके आसपास भाजपा के कई नेता और विशिष्ट नागरिक भी थे. वहीं से पावस ने आडवाणी पर अपने पिता की खड़ाऊं फेंकी, जो मंच पर जाकर उनके समीप ही गिरी. इस घटना से मंच पर बैठे नेतागण सन्न रह गए और आडवाणी दुख और शर्म के भाव छिपाकर शांत बने रहे. तभी पुलिस ने पावस को अपनी हिरासत में ले लिया.

पावस अग्रवाल पार्टी में अपनी उपेक्षा से दुखी और क्षुब्ध थे और उन्हें सबसे ज्यादा गुस्सा पार्टी की ज़िला इकाई के अध्यक्ष और कटनी के महापौर को लेकर था. उनका कहना था कि पार्टी अवसरवादी, सिद्धांतहीन लोगों को आगे बढ़ा रही है और पुराने निख़वान और समर्पित कार्यकर्ताओं की उपेक्षा कर रही है. पिछले विधानसभा चुनाव में उम्मीदवारों के चयन से भी वह दुखी थे. एक बार तो कटनी शहर में वह कांग्रेस की चुनाव प्रचार रैली में भी शामिल हो गए थे, लेकिन कुछ कांग्रेसी नेताओं ने उनकी उपस्थिति को भाजपा की साजिश मानकर उन्हें रैली से अलग कर दिया था. कटनी के कांग्रेस नेता और पूर्व विधायक सुनील मिश्रा का कहना है कि पावस अग्रवाल कभी कांग्रेस में नहीं रहे. व्यापार संबंधों के कारण कुछ कांग्रेस नेताओं से उनके मेलजोल रहे हैं, लेकिन वह कट्टर भाजपाई और हिन्दूवादी नेता हैं. लोकसभा चुनाव में सतना, जबलपुर, खजुराहो के भाजपा उम्मीदवारों के चयन को लेकर भी पावस अग्रवाल पार्टी से नाराज़ थे और उन्हें सबसे ज्यादा दुख इस बात का था कि उनकी बातों को पार्टी में कोई सुनने तक को तैयार नहीं है. खड़ाऊं प्रहार के बाद पुलिस हिरासत में पावस अग्रवाल ने कुछ टीवी पत्रकारों से बातचीत में कहा था कि आडवाणी फर्जी लौहपुरुष हैं. पार्टी को उन्हें प्रधानमंत्री पद का उम्मीदवार नहीं बनाना चाहिए था. आडवाणी ऐसे नेता हैं, जो राम का नाम लेते हैं तो जिन्ना की भी पूजा करते हैं.

बहरहाल, कटनी में लालकृष्ण आडवाणी पर एक भाजपा कार्यकर्ता के गुस्से का प्रदर्शन मध्यप्रदेश सरकार की लचर कानून–व्यवस्था का भी प्रमाण है. फिलहाल. राज्य सरकार और पार्टी के वरिख़नेता इस शर्मनाक घटना का तमाशा देखने के बाद झूठे तथ्यों के आधार पर मामले की गंभीरता को नजरअंदाज़ करने में लगे हुए हैं.

संध्या पाण्डे

feedback.chauthiduniya@gmail.com

राशिफल

(26 अप्रैल से 3 मई तक)

मेष
21 मार्च से 20 अप्रैल

कार्य के स्तर पर आप नए विचारों से एक मुकाम बना लेंगे. दृढ़ता से फैसले करें नहीं तो आपके विरोधियों को लाभ हो सकता है. व्यापार में आपके लिए आगे लाभ का समय है. हालांकि संपत्ति से जुड़े मामलों और हाल के समझौतों से लंबे समय तक फायदे को लेकर कुछ अनिश्चितताएं भी रहेंगी.

वृष
21 अप्रैल से 20 मई

अपने तौर-तरीकों में बदलाव लाना ही आपके लिए सफलता का द्वार खोलेगा. कार्यक्षेत्र में अपने विचारों को सही तरह से पेश करना एक चुनौती होगी. अच्छी बात है कि आप इस हफ्ते समय-प्रबंधन में सफल रहेंगे और कई महत्वपूर्ण लक्ष्यों तक पहुंच सकेंगे. व्यापार में लाभ के लिए नए स्रोतों और आयामों की तलाश के लिए अधिक प्रयास की ज़रूरत है.

मिथुन
21 मई से 20 जून

इस हफ्ते आपको नए अवसर मिलेंगे. साथ ही आपको भाग्य का साथ भी मिलेगा. अपने कार्यों को कल पर न टालें. आपको अपनी सोच में बदलाव लाकर नए स्तर पर सोचने की ज़रूरत है, ताकि आप नए अवसरों को पहचान सकें. व्यापार में लाभ के मामले में यह सप्ताह संतोषप्रद रहेगा.

कर्क
21 जून से 20 जुलाई

आप समय की मांग के साथ चल रहे हैं. यही वक्त है कि कार्य और धन के मामलों में अपने अनुभव और क्षमता का प्रयोग कर लाभ कमाया जाए. व्यापार में आप जितनी जल्दी बिना फायदे की पुरानी स्थितियों से बाहर निकल आएंगे, आपके लिए उतना ही अच्छा होगा. नए संबंध फायदेमंद होंगे.

सिंह
21 जुलाई से 20 अगस्त

इस हफ्ते नए विचार बनेंगे. दूसरों से बेहतर संबंध आपके विकास का जरिया बनेंगे. आपके लिए बेहतर होगा कि किसी और के बताए रास्ते पर चलने के बजाए आप अपना रास्ता खुद तय करें. आप को इस हफ्ते व्यापार में नए निवेशों, छोटी अवधि केसौदों और आपूर्ति व वितरण के स्रोतों पर नए सिरे से ध्यान देने की ज़रूरत है.

कन्या
21 अगस्त से 20 सितंबर

अच्छी बात है कि आप जो करना चाह रहे हैं उसके लिए आपको इजाज़त मिल जाएगी. इस हफ्ते आप कई महत्वपूर्ण लोगों को प्रभावित करने में सफल रहेंगे. हालांकि सही दिशा न दिख पाने से आपकी प्रतिभा का पूरा इस्तेमाल नहीं हो पा रहा है. व्यापार में आप बाज़ार की मांगों से पहले की अपेक्षा अधिक लाभ कमा पाएंगे.

तुला
21 सितंबर से 20 अक्तूबर

धीरे-धीरे ही सही लेकिन आपके पक्ष में माहौल बन रहा है. आपको ध्यान केंद्रित रखने और आसपास के माहौल को समझने की ज़रूरत है. भविष्य के बारे में जो योजनाएं आपने सोच रखी हैं, उनपर काम करने का वक्त आ गया है. व्यापार में जल्दी में लिए फैसलों से बेहतर होगा कि लंबी योजना बनाकर काम करें.

वृश्चिक
21 अक्तूबर से 20 नवंबर

कार्यस्थल पर आप जल्द ही नए रास्ते पर होंगे. दरअसल आप एक नई और बेहतर कार्यपद्धति बना कर बढ़ रहे हैं, जो काफी फायदेमंद साबित होगी. इस रास्ते पर जो भी परेशानियां आएंगी, वह आपको और मज़बूत बनाएंगीं. व्यापार में निवेश के क्षेत्र में कुछ नया करने का समय आ गया है.

धनु
21 नवंबर से 20 दिसंबर

आप जो भी काम कर रहे हैं उसमें सौ फीसदी से ज्यादा मेहनत कर रहे हैं. परिस्थितियां आपको इसके मौके भी दे रही हैं. आपकी मेहनत दूसरे महत्वपूर्ण व्यक्तियों को भी प्रभावित कर रही है. हालांकि आपको अति आत्मविश्वास और ज़रूरत से अधिक आशाओं के बोझ से बचना होगा. व्यापार में यह सप्ताह सामान्य रहेगा.

मकर
21 दिसंबर से 20 जनवरी

किसी भी काम के लिए एक से अधिक विकल्प खुले रखकर काम करने की आदत आपके लिए फायदेमंद साबित होगी. आपको अपने लक्ष्य पूरे करने के साथ-साथ दूसरों को भी खुश रखना पड़ेगा. अगर परिणाम जल्द न मिले तो घबराएं नहीं, आप शीघ्र ही सफलता का स्वाद चखेंगे. व्यापार में बाज़ार के बचे-खुचे मामले निपटाने का यही सही वक्त है.

कुंभ
21 जनवरी से 20 फरवरी

इस हफ्ते आपको अपने अनुभव को बढ़ाने और नई परिस्थितियों को समझने के मौके मिलेंगे. आपकी रचनात्मकता नई ऊंचाई पर होगी. इसका पूरा लाभ उठाएं. आपका कोई सीनियर आपकी सफलता के लिए बहुत महत्वपूर्ण हो सकता है. व्यापार में आसार अच्छे हैं, लेकिन अपने निवेश पर और ध्यान देने की ज़रूरत है.

मीन
21 फरवरी से 20 मार्च

आप किसी की आलोचना से डरे बिना अपना काम करते रहिए. बेहतर हेगा कि आप नकारात्मक सोच वालों से दूर रहें. आपको अपनी कोशिशों के बारे में लोगों को बताना होगा, वरना श्रेय कोई और ले सकता है. छोटी-छोटी बातों पर ध्यान दें, लाभ मिलेगा. व्यापार में कर्ज लेने से बचें.

वीनू संदल

feedback.chauthiduniya@gmail.com

आनेवाला त्योहार
बुद्ध पूर्णिमा

वैशाख माह की पूर्णिमा अर्थात बुद्ध पूर्णिमा, भगवान बुद्ध की जयंती न केवल बुद्ध धर्म बल्कि हिंदू धर्म का भी एक बड़ा अवसर है. भगवान बुद्ध बौद्ध धर्म के संस्थापक तो हैं ही, प्रचलित हिंदू मान्यताओं के अनुसार भगवान विष्णु के दशावतारों में भी एक हैं. मान्यता है कि बुद्ध विष्णु के नौवें अवतार हैं. जब त्रेता की समाप्ति हुई और कलियुग का आरंभ हुआ तो हिंदू धर्म अत्यधिक कर्मकांडी हो चुका था. कर्मकांड और विकृत होते धर्म को पुनर्जीवित करने के लिए ही भगवान ने कपिलवस्तु के राजा शुदोधन के यहां जन्म लिया. बचपन में सिद्धार्थ के नाम से जाने-जाने वाले बुद्ध ने जब संसार में ज़रा(बुढ़ापा), व्याधि (बीमारी) और मृत्यु को देखा तो संसार से उन्हें विरक्ति हो गई. रातोंरात उन्होंने घर छोड़ दिया और वन में चले गए. वहां जाकर घोर तपस्या के बाद भी जब उनके मन को शांति नहीं मिली तो सिद्धार्थ ने तप छोड़ दिया. फिर उन्होंने अन्न-जल ग्रहण करने के बाद गया में फल्गु नदी के किनारे एक वृक्ष के नीचे जब दोबारा ध्यान लगया तो उन्हें आत्मज्ञान की प्राप्ति हुई. इस तरह बोधि प्राप्त कर वह सिद्धार्थ से बुद्ध हो गए और वह स्थान और वृक्ष जहां उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ, वे क्रमशः बोधगया और बोधिवृक्ष के नाम से प्रसिद्ध हो गए.

जिस मार्ग को बुद्ध ने मोक्ष प्राप्ति के लिए चुना उसे अष्टांग योग का मार्ग कहा जाता है. बुद्ध ने धर्म साधना के लिए मध्यम मार्ग चुना. दरअसल यह मार्ग हिंदू धर्म में फैल चुकी अतिवादिता का प्रतीकार था. बुद्ध के प्रवचनों को मानने वाले और उनपर चलने वाले बौद्ध कहलाए.

मान्यता है कि बुद्ध विष्णु के नौवें अवतार थे. जब त्रेता की समाप्ति हुई और कलियुग का आरंभ हुआ तो हिंदू धर्म अत्यधिक कर्मकांडी हो चुका था. कर्मकांड और विकृत होते धर्म को पुनर्जीवित करने के लिए ही भगवान ने कपिलवस्तु के राजा शुदोधन के यहां जन्म लिया.

बौद्ध धर्म के सबसे बड़े अनुनायियों में सम्राट अशोक का नाम लिया जाता है. अशोक ने बौद्ध धर्म अपनाने के बाद संसार भर में इसके प्रसार के लिए दूत भेजे. भारत में तो धीरे-धीरे इसका प्रभाव कम हो गया, लेकिन विश्व में कई देशों ने इसे अपना लिया. जापान, चीन, कोरिया, श्रीलंका, म्यांमार जैसे देशों में बौद्ध धर्म बहुत लोकप्रिय हुआ. भारत में बौद्ध धर्म सामाजिक बदलाव का भी माध्यम बन गया. बाबा साहब अंबेडकर के बौद्ध धर्म अपनाने के बाद यह धर्म भारत में पिछड़े और दलित लोगों के विकास का माध्यम बन गया. इस तरह बुद्ध के जन्म के हज़ारों वर्षों के बाद भी उनकी शिक्षाएं और ज्ञान प्रासंगिक बने हुए हैं. बुद्ध के अहिंसा और शांति के उपदेश भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के भी अस्त्र बने. आज भगवान बुद्ध से जुड़े ऐतिहासिक स्थलों का विकास कर एक बौद्ध सर्किट बनाने की योजना है. भगवान बुद्ध से जुड़े स्थान जैसे बोधगया (ज्ञान प्राप्ति), सारनाथ (प्रथम उपदेश), कुशीनगर (महापरिनिर्वाण) को आपस में जोड़ कर एक अंतरराष्ट्रीय पर्यटन गलियारा विकसित करने की योजना है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

हिंदू होने का धर्म

सनातन धर्म रूढ़िवादी मायनों में धर्म नहीं है. यह धर्म से अधिक एक जीवन पद्धति है. यही वजह है कि इसमें दार्शनिक पक्ष पर अधिक ज़ोर दिया गया है. कर्मकांड की जगह सनातन धर्म में ज्ञानकांड पर अधिक बल दिया गया है. सनातन धर्म में दो तरह के दर्शन मुख्य तौर पर अपनी जगह बनाए हैं. एक आस्तिक दर्शन है, तो दूसरा नास्तिक. आस्तिक दर्शन में ईश्वर की सत्ता को स्वीकारा जाता है और उसके प्रति पूर्ण समर्पण अभिव्यक्त किया जाता है, जबकि नास्तिक दर्शन में ईश्वर या भगवान की सत्ता से पूरी तरह इंकार कर दिया जाता है.

नास्तिक दर्शन में सबसे बड़ा नाम चार्वाक का है. वह एक विद्रोही किस्म के ऋषि थे. उनकी सबसे प्रसिद्ध उक्ति-यावज्जीवेत सुखं जीवेत, ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत, भस्मीभूतस्य देहस्य, कुत्रापि पुनरागमन-को कर्जखोर लगातार इस्तेमाल करते हैं. उनके कहने का भावार्थ है कि जब तक जियो, सुख से रहो, शरीर के भस्म होने (यानी मौत के बाद चिता में जलने)के बाद कहां का पुनर्जन्म. चार्वाक की इस नीति को लोगों ने अपने हिसाब से खूब तोड़-मरोड़ कर इस्तेमाल किया. वह कुल मिलाकर एक भौतिकवादी दार्शनिक थे, जिन्होंने अपने हिसाब से सनातन धर्म में आई विकृतियों पर प्रहार किया.

चार्वाक का अर्थ होता है-चारू यानी सुंदर बात करने वाला. चार्वाक के अलावा बौद्ध और जैन चिंतन भी नास्तिक दर्शनों में गिना जाता है. उनकी चर्चा फिर कभी. अभी तो हम आपसे सनातन धर्म के आस्तिक दर्शनों के बारे में ही बात करना चाहते हैं. सनातन धर्म में कुल मिलाकर आस्तिक दर्शन की छह शाखाएं हैं. इन पर हम एक-एक कर बात कर सकते हैं. दर्शन शब्द की उत्पत्ति दर्श से हुई है, जिसका अर्थ होता है, देखना. दर्शन का इस्तेमाल अधिभौतिक (मेटाफिजिकल) संदर्भ में की जाती है, जब किसी दिव्य या ईश्वरीय तत्व की विवेचना की जाती है. कोई भी इस दिव्य तत्व के दर्शन मंदिरों की मूर्तियों में या फिर किसी ज्ञानी जरिए कर सकता है. भारतीय दर्शन की आस्तिक धारा की छह शाखाएं हैं.

इनमें सबसे पहला शास्त्रीय दर्शन न्याय है. इसके प्रणेता गौतम नाम के ऋषि माने जाते हैं. न्याय का अर्थ होता है, व्यवस्था, कानून या तर्क. न्याय दर्शन तार्किक सच्चाई के सिद्धांत पर आधारित है. इस दर्शन का उद्देश्य ज्ञान की प्राप्ति है. हालांकि ज्ञान को भी उचित और अनुचित के आधार पर देखा गया. उसी ज्ञान को प्राप्य माना गया है जो रचनात्मक, तार्किक और उपयोगी हो. वही उचित ज्ञान है. न्याय दर्शन में प्रश्न-उत्तर और तर्क की जो व्यवस्था है उसे सनातन धर्म की सभी

शाखाओं ने अपनाया है.दूसरा शास्त्रीय दर्शन वैशेषिक है. वैशेषिक की उत्पति विशेष से हुई है. यहां विशेष का अर्थ अंतर से है. वैशेषिक दर्शन में प्रकृति के विभिन्न स्वरूपों को समझने की बात कही गई है. ऋषि कणाद के द्वारा प्रारंभ किया गया यह दर्शन प्रकृति को नवद्रव्यों भूमि, जल, प्रकाश, वायु, शून्य, समय, अंतरिक्ष, आत्मा और मस्तिष्क में बांटता है. इस दर्शन में मानना है कि इन नवद्रव्यों को समझ कर ही जीवन के रहस्य को समझा जा सकता है. न्याय और वैशेषिक एक-दूसरे के पूरक हैं. एक तर्क पर बल देता है तो दूसरा जीवन के रहस्य को समझने पर.

सांख्य, कपिल मुनि के सांख्य सूत्रों पर आधारित दर्शन है. सांख्य दर्शन मूलतः विश्व में जीवन के विभिन्न वर्गों की बात करता है. सांख्य सभी आस्तिक दर्शनों में आधुनिक विज्ञान के निकटतम दिखता है. इसमें गणना पर विशेष जोर है. विश्व के पदार्थों को पच्चीस तत्वों में विभाजित किया गया है. पहले दो तत्व पुरुष और प्रकृति हैं. प्रकृति स्वयं तीन गुणों के मेल से बनी है-सत्व, रजस, तमस. योग अर्थात जोड़ना, दर्शन और कर्म के जोड़ से बना दर्शन है योग. योग दर्शन का सर्वोच्च उद्देश्य सनातन धर्म की सर्वश्रेष्ठ अवस्था समाधि तक पहुंचना है. समाधि की स्थिति विशेष पारलौकिक अनुभव के द्वारा पूर्ण वैयक्तिक रूपांतरण की स्थिति है. योग का अर्थ अंतर्मन की दुविधाओं का समाधान और स्वयं को पहचानने की शक्ति का विकास करना है. आजकल योग को शारीरिक व्यायाम के अर्थ में समेट दिया गया है. वस्तुतः योग और सांख्य ऐसे दर्शन हैं जिनका प्रभाव सनातन धर्म के हर क्षेत्र में नज़र आता है.

अगला दर्शन मीमांसा है. जैमिनी ऋषि इस दर्शन के प्रणेता माने गए है. उन्होंने ईसा से 200 वर्ष पहले मीमांसा सूत्रों की रचना की. यही सूत्र मीमांसा दर्शन के आधार हैं. मीमांसा दर्शन में वेदों की ऋचाओं के सही अर्थ और प्रयोग पर बल दिया गया है. इस दर्शन के अनुसार वैदिक रीतियों का सही प्रयोग ही मुक्ति का एकमात्र मार्ग है. मीमांसा में वेदों को कंठस्थ करने से अधिक बल वेदों के सही अर्थ को समझने पर दिया गया है. जिज्ञासा को ही मोक्ष का मार्ग माना गया है.

वेदांत दर्शन को उत्तर मीमांसा दर्शन के नाम से भी जाना जाता है. वेदांत अर्थात वेदों का अंत और वेदों के पश्चात. वेदांत दर्शन में वेदों से अधिक उपनिषदों और आर्यकों को महत्वपूर्ण माना गया है. वेदांत दर्शन के अनुसार ब्रह्म ही एकमात्र सत्य है, मानव जीवन का उद्देश्य ब्रह्म की प्राप्ति है. वेदांत सूत्रों की रचना ऋषि बादरायण ने की थी.

सभी दर्शन कहीं न कहीं ईश्वरीय सत्ता को स्वीकार करते हुए उस तक पहुंचने के सर्वश्रेष्ठ मार्ग की व्याख्या करते हैं. दर्शन असल में एक जीवन पद्धति हैं जिनका उद्देश्य मानव जीवन को बेहतर बनाना है. दर्शन मानव और प्रकृति के सह-अस्तित्व की सबसे महत्वपूर्ण कड़ी हैं. दर्शन सनातन धर्म के मूल स्वरूप के आधार हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

रेत में आग

अनंत विजय

विश्व पुस्तक मेले में पिछले वर्ष जब भगवानदास मोरवाल का उपन्यास-रेत- छपकर आया था तो उसकी ख़ासी चर्चा हुई थी. प्रशंसा करने में खासे कंजूस माने जाने वाले हंस के संपादक राजेंद्र यादव ने न केवल इस कृति की दिल खोलकर तारीफ़ की, बल्कि इसे वर्ष की श्रेष्ठ कृतियों में शुमार भी किया. राजेंद्र यादव के अलावा भी इस उपन्यास की प्रशंसा करनेवालों की एक लंबी फेहरिस्त है. आलोचकों और समीक्षकों के अलावा पाठकों ने भी रेत को हाथों हाथ लिया और साल भर के अंदर ही इसका दूसरा संस्करण प्रकाशित हो गया. इन दिनों यह उपन्यास एक दूसरी ही वजह से चर्चा में है. इस उपन्यास से गिहार समुदाय के लोग बुरी तरह भड़के हुए हैं. उत्तरप्रदेश के छिबरामऊ में इस समुदाय की महिलाओं ने रेत को काले कपड़े में बांधकर पहले तो फांसी पर लटकाया, फिर इसे आग के हवाले कर उसका अंतिम संस्कार कर डाला. विरोध की आग इससे भी ठंडी नहीं हुई तो महिलाओं ने सैयद बंगाले शाह की मज़ार के पास खड़े एक पेड़ पर रंग-बिरंगे फीते बांधकर रेत के लेखक भगवानदास मोरवाल के लिए यह मनौती मांगी कि वह धनहीन, यशहीन और विद्याहीन हो जाएं. बात यहीं तक नहीं रुकी. गिहार समाज के प्रतिनिधित्व का दावा करनेवाले एक संगठन-भारतीय आदिवासी गिहार विकास समिति-के प्रदेश उपाध्यक्ष दिनेश गिहार ने छिबरामऊ के प्रथम श्रेणी ज्यूडीशियल मजिस्ट्रेट की अदालत में उपन्यासकार भगवानदास मोरवाल समेत कई लोगों के ख़िलाफ़ मुक़दमा दर्ज़ कर कार्रवाई की मांग कर डाली. माननीय अदालत में अब तक इस याचिका पर सुनवाई नहीं हो पाई है .

दरअसल यह विवाद दिल्ली से प्रकाशित एक साप्ताहिक में इस उपन्यास की समीक्षा के बाद शुरू हुआ. प्रकाशित समीक्षा को ही इस पूरे विवाद की जड़ बना दिया गया है. न तो इस समुदाय के बारे में उपन्यास में कोई चर्चा है और न ही इस समीक्षा में कहीं भी गिहार समुदाय के बारे में कुछ कहा गया है. यह विवाद

उपन्यास में माना गुरु के नाम के होने की वज़ह से हुआ है. अगर हम उपन्यास को देखें तो उस उपन्यास के केंद्र में है माना गुरु और मां नलिन्या की संतान कंजर और उसका जीवन. कंजर अर्थात जंगल में घूमनेवाला. अपने लोक विश्वासों व लोकाचारों की धुरी पर अपनी अस्मिता और अस्तित्व के लिए संघर्ष करती एक जनजाति. इस पूरे उपन्यास में कंजर समुदाय की स्त्रियों के स्याह संसार को श्रमपूर्वक, शोध के आधार पर उजागर किया गया है. लेकिन गिहार समुदाय के लोगों का मानना है कि माना गुरु उनके इष्टदेव हैं और उनकी संतान यानी कि गिहार समाज की महिलाओं को इस कृति में वेश्यावृत्ति करते दिखाया गया है जो कि घोर आपत्तिजनक है.

अख़बारों के संवाददाताओं की अज्ञानता उनकी ही रिपोर्ट से ज़ाहिर हो गई. एक दैनिक ने इसे-गिहार समाज की स्त्रियों के देह व्यापार पर केंद्रित उपन्यास बता डाला, तो दूसरे ने इसे गिहार समाज की महिलाओं पर केंद्रित उपन्यास कह डाला.

मैंने भी इस उपन्यास को पढ़ा है. इसमें कहीं से भी यह ध्वनित नहीं होता है कि गिहार समुदाय को जानबूझकर निशाना बनाया गया है. कंजर समुदाय की स्त्रियों को ज़रूर वेश्यावृत्ति के धंधे में दिखाया गया है, लेकिन वह भी रस लेने या अपमानित करने के इरादे से नहीं बल्कि उनकी समस्याओं को उजागर करने के लिए. इस पूरे उपन्यास में लेखक इस बात को लेकर अतिरिक्त सावधान दिखाई देता है कि कहीं से भी अश्लीलता का चित्रण न हो. माना गुरु और वेश्यावृत्ति का प्रसंग जब भी आया है, स्त्रियों की बेबसी और उनकी अंधेरी ज़िंदगी को सामने लाने की कोशिशों के साथ ही .

दरअसल अगर हम समग्रता में देखें तो यह पूरा का पूरा विवाद अज्ञानता की वजह से उठा प्रतीत होता है. लगता है कि किसी ने भी इस उपन्यास को समग्रता में न तो पढ़ने की कोशिश की और न ही उसे समझने की. सिर्फ़ एक समीक्षा के आधार पर बगैर किसी तार्किक आधार पर सिर्फ़ भावनाओं में बहकर इतना बड़ा वितंडा खड़ा कर दिया गया . इस पूरे मामले को स्थानीय अख़बारों ने भी खूब हवा दी. अख़बारों के संवाददाताओं की अज्ञानता उनकी ही रिपोर्ट से ज़ाहिर हो गई. एक दैनिक ने इसे-गिहार समाज की स्त्रियों के देह व्यापार पर केंद्रित उपन्यास बता डाला, तो दूसरे ने इसे गिहार समाज की महिलाओं पर केंद्रित उपन्यास कह डाला. एक तो लोगों की भावनाएं भड़क रही थीं, उसपर से अख़बारों में गलत तथ्यों का आना आग में घी डालने जैसा साबित हुआ. प्रदर्शन और बढ़ता गया. अख़बारों के संवाददाताओं ने भी तथ्यों को परखने की कोई कोशिश नहीं की .

इस पूरे मसले पर लेखक संगठनों की चुप्पी भी बेहद शर्मनाक है और उनको कठघरे में भी खड़ा करती है. महीनों से चल रहे इस विवाद में किसी भी लेखक संगठन ने इस पूरी घटना पर विचार करने की ज़हमत नहीं उठाई. हद तो यह कि किसी भी संगठन ने विरोध का बयान जारी करने की रस्म अदायगी भी नहीं की, भर्त्सना करने की बात तो दूर. राजेंद्र यादव को छोड़कर किसी लेखक ने भी एक शब्द नहीं कहा. इससे पता चलता है कि समाज में क्रांति, बदलाव आदि की बड़ी-बड़ी बातें करने वाले लेखकों के सरोकार कितने छोटे और संकुचित हो गए हैं. इस पूरे मसले पर मुझे मुक्तिबोध की लगभग विस्मृत और ओझल कविता का पूरा शीर्षक याद आ रहा है-आलिमो फाजिल सिपहसालार, सब सरदार हैं खामोश !

feedback.chauthiduniya@gmail.com

चर्चा में कुंवर नारायण

■जरूरी है जिजीविषा

अभी चर्चा में हैं कुंवर नारायण. उन्हें पद्मश्री सम्मान नहीं मिलने के कारण या कहिए कि उनकी पुस्तक को ज्ञानपीठ पुस्कार से नवाज़े जाने के कारण. उनकी यह क़िताब उस समय आई है जब देश में नई अर्थव्यवस्था की धूम है और समाजवादी भारत की कल्पना पीछे छूट चुकी है. आज से तीन दशक पहले हम तीसरी दुनिया की तलाश में थे. लगभग उसी दौर में कुंवर नारायण की कविताओं की अर्थवत्ता ने साहित्यिक महारथियों को आकर्षित किया था. तब देश की यह समझ थी कि अमेरिकी पूंजीवाद और भूतपूर्व सोवियत गणराज्य मार्का साम्यवाद के बीच से भी कोई रास्ता निकल सकता है, लेकिन सोवियत संघ के विघटन के बाद इस अवधारणा ने भी दम तोड़ दिया. रही-सही कसर 1992 में नरसिम्हा राव ने उदारीकरण की नीति अपना कर पूरी कर दी तथा भारत के अर्थतंत्र को एक नई दिशा दी. इसके बाद से देश में जीवन की समझ में भी बदलाव आया. आदमी संसाधन के रूप में देखा जाने लगा. इस परिवर्तन को सपाट ढंग से न समझा जा सकता और न युग द्रष्टाओं को समझाया जा सकता है कि सभ्य आदमी का मतलब निरर्थक या कायर हो जाना क्यों होता जा रहा है और क्यों उदारीकरण के बाद से देश एकांगी विकास की ओर बढ़ते हुए अपनी पीठ थप-थपाते हुए कह रहा है कि हमने चांद पर अपना परचम फहरा लिया है. बात ठीक है, हमारे कदम चांद तक पहुंचे है. लेकिन इस सच्चाई की छाया यह है कि देश में किसानों की आत्महत्या का सिलसिला भी उस दौर में शुरू हुआ जब हम चांद पर पैर रखने के मनसूबे बांध रहे थे. आजादी के छह दशक बीत जाने के बाद भी देश में अमीरी और गरीबी की खाई, घटी नहीं, बढी है और बढ़ रही है.

भविष्य में इस अंतर के और बड़ा हो जाने के आसार हैं. ऐसे में कवि कुंवर नारायण की यह स्वीकृति-धीरे धीरे टूटता जाता, मेरी हंसी से मेरा नाता-आम आदमी का कथ्य बन उभरता है और मन में सवाल छोड़ता है कि हम जिस प्रगति की बातें कर रहें हैं, क्या वह प्रगति है? एक ओर गांवों में सुविधाओं की बहाली के लिए कदम उठ रहे हैं और दूसरी ओर गांवों के लोग पलायन के लिए मज़बूर हैं. शहरों में भी उन्हें खड़े होने की जगह नहीं हैं. मूल्यों की बात नहीं! न्याय की प्रांसगिक कसौटी नहीं ! बदलते जीवन बोधों में सामंजस्य नहीं! ऐसे में कुंवर नारायण की चर्चा उनकी ही पंक्तियां की ओर ध्यान खींचती है:-

ट्रेन ही नहीं एक राकेट भी
पकड़ना है मुझे अंतरिक्ष के लिए
ताकि एक डब्बे में ठसाठस भरा
मेरा ग़रीब देश भी
कह सके सगर्व कि देखो
हम एक साधारण आदमी भी
पहुंचा दिए गए चांद पर.

कुंवर नारायण इसलिए भी चर्चा के हक़दार हैं कि उनके शब्दों ने यथार्थ की मुकम्मिल तस्वीर खींचने की कोशिश में सफलता पाई है-

अगर तुम मालामाल हो, तो हर आदमी बिकाऊ है. युग के इस कुत्सित यथार्थ बोध शोषण से मृत है समाज, कमज़ोर हमारा घर है के बावज़ूद यह कल्पन- किन्तु आ रही नई जिन्दगी, यह विश्वास अमर है-के माध्यम से कवि कुंवर नारायण ने युग को वह आशावादिता दी है, जिसकी आज बड़ी ज़रूरत है. ज़रूरी है जिजीविषा. इसलिए भी चर्चा में हैं कुंवर नारायण.

कुंवर नारायण

जन्म	:	19 सितम्बर 1927
जन्म स्थान	:	फ़ैजाबाद, उत्तरप्रदेश
कुछ प्रमुख कृतियां	:	चक्रव्यूह (1956), तीसरा सप्तक (1959), परिवेश: हम-तुम (1961), आत्मजयी/प्रबन्ध काव्य (1965), अपने सामने (1979), कोई दूसरा नहीं, इन दिनों
विविध	:	कविता संग्रह कोई दूसरा नहीं के लिये 1995 का साहित्य अकादमी पुरस्कार. वर्ष 2008 का ज्ञानपीठ पुरस्कार.
जीवनी	:	कुंवर नारायण / परिचय

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

हम अभी सूफ़ी के बचपन की कहानी पढ़ रहे हैं कि कैसे सूफ़ी ने तस्करी की राह देखी और कैसे उस राह पर बह चल पड़ा.

मुसलमान

आबिद सुरती

कई डॉक्टरों को बदलने के बाद भी जब उनकी स्थिति में कोई अंतर न आया तो हमने दरगाहों की मदद ली. कोई कहता कि फलां पीर की दरगाह पर जाने से आख़िरी स्टेज पर पहुंचे पागल भी ठीक हो जाते हैं, तो मेरी मां मेरे पिता को लेकर वहां पहुंच जाती. कोई कहता कि किसी गांव में किसी औलिया का थानक है, जो चमत्कारों के लिए मशहूर है, तो पिताजी को रेल में चढ़ाकर हम वहां ले जाते. अंत में हम रतलाम के समीप जावरा तक का चक्कर लगा आए.

इस दौड़-धूप में, ख़ासकर आबो-हवा बदलने से मेरे पिता की हालत में थोड़ा सुधार आता, थोड़ी आशा बंधती, लेकिन सिर्फ़ थोड़े दिनों के लिए, फिर वही खाट, वही कमरा, वही दीवारें. कभी वह छत को घूरते नज़र आते तो कभी दीवारों को.

मेरी मां ने कुछ और घरों का काम संभाल लिया. उसकी दिनचर्या हमारे परिवार में सबसे ज्यादा कठोर थी. तड़के घर का सारा काम निपटाकर वह अड़ोस-पड़ोस के घरों के काम में व्यस्त हो जाती. किसी के बरतन मांजती तो किसी की मिर्चियां पीसती. किसी के घर के मैले कपड़ों का गट्ठर लेकर चाली के नल के नीचे धोने बैठ जाती तो किसी के घर राशन का दूध पहुंचाती. पूरे दिन की इस कड़ी मेहनत के बाद वह पांच रुपये कमा लेती थी.

प्रश्न मेरी पढ़ाई का भी था. प्रश्न मेरे छोटे भाई की पढ़ाई का भी था. मैंने चिकी, पिपरमिंट तथा खट्टी-मीठी गोलियां बेचनी शुरू कर दी. मैं डोंगरी के मुख्य मार्ग पर कोई सुरक्षित ओटला देखकर जगह ढूंढ़कर बैठ जाता.

इक़बाल मुंडागली से निकलकर पाला गली में आता और ख़ोजा मस्ज़िद के पास बैठ जाता. उसके खोमचे में चिकी, पिपरमिंट तथा खट्टी-मीठी गोलियों के साथ सफ़ेद इमली, बेर और आंवले भी रहते थे. सालों बीत गए इस बात को, पर सूफ़ी संघर्ष के उन दिनों में साथ देने वाले बचपन के दोस्तों को आज भी नहीं भूला-खासतौर से रास्ते पर दुकान लगाने का विचार सुझाने वाले क़ादर को.

पिछले बीस वर्षों में सूफ़ी ने करोड़ों की हेराफेरी की है, हरे नोटों के बंडल एक हाथ से आए हैं, दूसरे हाथ से गए हैं. आज वह बांद्रा में स्थित ज़रीन लॉज नामक मकान के टेरेस वाले फ्लैट में सभी आवश्यक सुविधाओं के साथ जी रहा है और आज भी क़ादर पाला गली में वही खोमचा लगाकर बैठता है.

जब कभी मैं डोंगरी जाता हूं तो अनायास ही मुझे उसकी याद आ जाती है, सूफ़ी ने कहा, मैं दो घड़ी उसके साथ गप्पें मार लेता हूं.

आप चाहें जो उसे झोपड़ी से उठाकर महल में बैठा सकते हैं. मैंने उसे याद दिलाया.

सही, उसने बताया, कभी-कभी मेरी भी यही इच्छा होती है, जाने कितनों की मैंने खुले हाथ से मदद की है.

मैं धैर्य खोकर बीच में ही बोल उठा, तो इस ग़रीब क़ादर की मदद करने में आप अपना हाथ क्यों ख़ीच लेते हैं?

उसके शरीर पर सुखी आदमी की कमीज़ है, कहते हुए सूफ़ी ने स्पष्ट किया, पूरे दिन वह अपनी मस्ती में रास्ते पर बैठा रहता है. ज़रूरत भर की कमाई करके शाम को घर लौटता है. खाना खाकर चैन से सो जाता है. आज भी उसके जीवन को दु:ख नहीं छू पाया और मैं उसे निन्यानबे के चक्कर में डालकर दु:खी नहीं करना चाहता.

हाजी मस्तान के जीवन में अगर हम झांककर देखें तो पता चलेगा कि वह भी समानांतर परिस्थितियों से होकर गुज़रा है. उसने भी अपने जीवन की शुरुआत चिकी तथा खट्टी-मीठी गोलियां बेचकर की थी.

एक तरह से देखें तो इक़बाल और मैं ज्यादा भाग्यशाली थे. रहने के लिए हमारे पास घर था, मस्तान मुसाफ़िरख़ाने के पास एक झोपड़े में रहता था. क्रॉफर्ड मार्केट के पास वह फातेमाबाई स्कूल में पढ़ता था. वह मूलत: रामेश्वर का रहने वाला था. हमारी मातृभाषा गुजराती थी, उसकी तमिल.

अपनी आमदनी में थोड़ा इज़ाफ़ा करने के लिए मैंने रद्दी में से पत्रकार-व्यंग्यकार गोलीबार की पुस्तिकाएं तथा दर्जन-भर बाल-पुस्तकें खरीदी थीं. स्कूल जाता तो पाठ्य-पुस्तकों के साथ अपना पुस्तकालय भी ले जाता, एक-एक पैसा लेकर एक-एक दिन के लिए अपनी कक्षा के विद्यार्थियों को पढ़ने के लिए देता.

आमदनी पैदा करने के लिए मस्तान चाय की गुमटी चलाने वाले एक मलबारी की नौकरी में लगा था. उसका काम बाहरवाले का था. आसपास की दुकानों, दफ्तरों से ऑर्डर आए तो चाय के कप लेकर वहां पहुंच जाना और फुरसत के समय उसी गुमटी पर बैठकर सपने देखना.

इक़बाल मुंडागली से निकलकर पाला गली में आता और ख़ोजा मस्ज़िद के पास बैठ जाता. उसके खोमचे में चिकी, पिपरमिंट तथा खट्टी-मीठी गोलियों के साथ सफ़ेद इमली, बेर और आंवले भी रहते थे.

जब भी सामने से गुज़रती किसी कार को मस्तान देखता, उसकी आंखें ठहर जातीं. उसकी एकमात्र इच्छा अपनी खुद की कार में बैठकर शहर में घूमने की थी. इस समय तो वह खुद खुले पांव भटक रहा था. चाय की गुमटी पर काम ज्यादा था, आमदनी कम.

उसने स्कूल छोड़ा, चाय की गुमटी छोड़ी और बंदरगाह पहुंच गया. यहां जहाज़ों के बॉयलरों में घुसकर ज़ंग साफ़ करने तथा रंगने का काम सिर्फ़ बच्चे करते थे. बॉयलर का साइज़ इतना छोटा रहता था कि बड़ों के लिए उसके अंदर जाकर काम करना मुश्किल था. मस्तान को यह काम रास आ गया.

धीरे-धीरे उसकी उमर बढ़ती गई, शरीर भी बढ़ता गया. पर बॉयलर का साइज वही रहा. नया काम खोजने की आवश्यकता पड़ी, पर इसके लिए उसे डॉक के बाहर नहीं जाना पड़ा. वहीं वह कुली बन गया. कस्टम से उसे एक बिल्ला मिला, नंबर था तेईस. (न कि 786)

जिन दिनों इक़बाल रास्ते पर बैठकर चिकी बेचता था, मस्तान सोने की तस्करी में लग चुका था. कार में बैठकर बंबई शहर में घूमने की उसकी इच्छा कब की पूरी हो चुकी थी.

अपनी आमदनी में थोड़ी बढ़ोतरी करने के लिए इक़बाल ने भी भरसक कोशिशें कीं अब्बासी मंज़िल नाम के जिस मकान में वह रहता था, वह तीन मंज़िलों वाला था. इसमें पानी का दबाव हमेशा कम रहता था, इसलिए ऊपरी दोनों मंज़िलों की कोठरियों के नल लगभग सूखे रहते थे.

इन दोनों मंज़िलों के किराएदारों के लिए इक़बाल ने रात को पानी भरना शुरू कर दिया. उसका दिन तीन हिस्सों में बंट गया. सुबह स्कूल, शाम को रास्ते पर खोमचा लेकर बैठना और रात में पानी के फेरे.

तल-मंज़िले की चौकी के नल में से हंडा भरकर सीढ़ियां चढ़ता और दूसरी तथा तीसरी मंज़िल के किरायेदारों की टंकियों में डालकर वह फिर नीचे आता. रोज़ तीस से चालीस हंडे पानी भरता और रोज़ तीनेक रुपये कमा लेता.

सूफ़ी, मन में एक विचार उठा तो मैंने पूछा, आपके पापा हार्ट-पेशेंट थे. वे आपकी मदद नहीं कर सकते थे, यह तो समझा जा सकता है, पर आपकी अम्मी...

वह एक बार तपेदिक का शिकार हो चुकी थी, सूफ़ी ने स्पष्ट किया, दूसरे, अब उसकी सेहत पहले जैसे नहीं रही थी. पानी भरने जैसे मुश्किल कामों से पापा उसे दूर रखते थे.

इक़बाल को सिर पर हंडे उठाकर सीढ़ियां चढ़ते-उतरते देख उसकी मां और पिता दोनों के हृदय में हूक उठती थी. दोनों सब कुछ समझते थे, फिर भी खामोश थे. कोई उपाय सूझता नहीं था. खासकर हुसेन अली की खामोशी और भी गहरा रही थी. प्रश्न कर रही थी. नापसंद रास्ते से उठा खुदा की पसंदीदा राह पर बेटे को डालकर उसने कोई भूल तो नहीं की?

थककर चूर इकबाल कोठरी में बैठा था. अभी होमवर्क करना बाक़ी था. दोनो छोटे भाइयों को अभी लेसन (पाठ) करवाना था कि खुले दरवाज़े पर अली और मोगल दिखाई दिए.

हुसेन अली ने अली की तरफ़ देखा. उसके साथ आए अजनबी पर आंखें केंद्रित कीस्वलंबोतरे चेहरे पर छोटे बाल, खिचड़ी दाढ़ी तथा बड़ी-बड़ी आंखें, जो खासतौर से ध्यान खींच रहीं थीं. नाक चपटी थी. दोनों होंठों के बीच से सोने के एक दांत साफ दिखाई देता था. (हाजी मस्तान हंसता है तो सोने के उसके दो दांत चमक उठते हैं.) पोशाक में उसने आधी बांह की लंबी कमीज़ और धारीदार तहमद पहनी थी.

हुसेन अली मोगल के नाम से परिचित थे, चेहरे से नहीं. उन्होंने सोचा अली के साथ आया शख्स उसका बाप या रिश्तेदार होगा.

आइए. उन दोनों का स्वागत करते हुए वह खाट पर बैठ गए. पैर दबाती पत्नी खड़ी हो गई.

मोगल ने दोनों छोटे भाइयों के साथ होमवर्क कर रहे इक़बाल की तरफ़ देखा, एक कुर्सी खींची और हुसेन अली के सामने बैठ गया. अली उसके पीछे खड़ा रहा. गुलबानू एक कोने में, जहां छोटा-सा रसोईघर तथा चौका था, बैठकर प्राइमस फेंटाने लगी.

इक़बाल की तबीयत का समाचार लेने आया हुं. मोगल ने शुरुआत की,कई दिनों से दिखाई नहीं पड़ा. मैंने सोचा कि शायद ...

आप?

मेहनती लड़का है. हुसेनअली को बोलने का मौका न देते हुए, इक़बाल पर नज़र डाल मोगल ने आगे कहा, रोज़ के चालीस-पचास कमा लेता था और एकाएक गायब हो गया. अली से पूछा तो उसने बताया कि वह भला-चंगा है. मुझे भरोसा नहीं हुआ.

आप कौन? अब परिचय पूछने की ज़रूरत नहीं थी. हुसेन अली समझ गया, उसके सामने मोगल बैठा था. जिस दलदल में बेटा गहरे उतरे ,उसके पहले ही उन्होंने बाहर खींच निकाला था, वही दलदल आज घर में आ पंहुचा था. वही पाप घर की चहारदीवारी के भीतर पैदा हो गया था और संसार में पुण्य से अधिक आकर्षक पाप होता है.

हुसेन अली की स्थिति विकट हो गई . गुलबानू द्वारा जलाए गए स्टोव की कर्कश आवाज़ कोठरी की ख़ामोशी में सपष्ट सुनाई पड़ रही थी. मेहमान के लिए चाय का भगोना चढ़ाकर वह तिरछी आंखों से पति की तरफ़ देखती रही. निर्णय हुसेन अली को लेना था.

अचानक मौन धारण कर आकाश की ओर देखते हुए सूफ़ी से मैंने पूछा, फिर आपके पापा ने क्या निर्णय लिया?

हक़ीक़त में उनके लिए निर्णय लेने का प्रश्न ही नहीं था.

मैं चौंका, परिवार के बुजुर्ग वही थे. उनके ख़िलाफ़ जाकर आपकी अम्मी कुछ नहीं कर सकती थीं.

सही है उस समय वे खुद हिल गए थे, फिर भी उन्होंने मोगल को हां या ना में जवाब नहीं दिया

कारण?

जो इन्सान सिर्फ़ एक ही दिन और जीने वाला हो, वह सुख और दु:ख से ऊपर उठ जाता है.

मैं सूफ़ी के चेहरे को देखता रहा.

आपके पापा की मौत का दिन तय था, इसका पता आपको कैसे चला?

मोगल के चले जाने के बाद उन्होंने बताया था.

क्या कहा था?

यही कि अब उनका दाना-पानी ख़त्म हुआ. वह कह रहे थे,

(अगले अंक में जारी)

ब्लूटूथ का करिश्मा

आज के दौर में ब्लूटूथ का इस्तेमाल फैशन के साथ-साथ ज़रूरत भी है. यह बेहद आसान और सुविधाजनक है. ब्लूटूथ बिना तार के होता है. मोबाइल फोन, लैपटॉप, कंप्यूटर, प्रिंटर, डिज़िटल कैमरा और वीडियो गेम जैसे उपकरण इसके माध्यम से एक-दूसरे से जोड़े जा सकते हैं. इस तकनीक से न सिर्फ जानकारी एक-दूसरे से ली और दी जा सकती है, बल्कि इस प्रक्रिया में समय की भी काफी बचत हो जाती है. आपस में जुड़ने के लिए उपकरण रेडियो तरंगों का उपयोग करते हैं. ब्लूटूथ को कंप्यूटर से अन्य उपकरणों को जोड़ने वाले तारों की संख्या को कम करने के लिए विकसित किया गया था. हालांकि धीरे-धीरे इस तकनीक़ का प्रयोग बढ़ता चला गया और आज हालत यह है कि ब्लूटूथ का इस्तेमाल एक बच्चे से लेकर बड़े तक को करते हुए देखा जा सकता है. देखा जाए तो ब्लूटूथ का इस्तेमाल केवल छोटी दूरी तक ही हो सकता है, लेकिन अगर इस समस्या को नजरअंदाज़ कर दें तो ब्लूटूथ की खूबियों का लेखा-जोखा बता पाना भी मुश्किल हो जाएगा. आइए, सबसे पहले तो ब्लूटूथ की खूबियों के बारे में ही बात कर लें.

सामान्यत: लोग ब्लूटूथ को अपने मोबाइल सेट में संग्रहीत सामग्रियों का आदान-प्रदान करने के अलावा बातचीत के लिए भी करते हैं, लेकिन वास्तव में इसका उपयोग और भी तरीकों से किया जा सकता है. इसे आप अपने लैपटॉप, पीडीए और एमपी-थ्री प्लेयर के साथ जोड़कर

सामान्यत: लोग ब्लूटूथ का प्रयोग अपने मोबाइल सेट में संग्रहीत सामग्रियों का आदान-प्रदान करने के अलावा बातचीत के लिए भी करते हैं, लेकिन वास्तव में इसका उपयोग और भी तरीकों से किया जा सकता है.

अपनी यात्रा आरामदायक और रोचक बना सकते हैं. यह तकनीक़ सुविधाजनक होने के साथ-साथ बेहद सस्ती भी होती है. इसके अतिरिक्त ब्लूटूथ अपने आप संचालित होने वाली तकनीक है. तारों को जोड़ने की सबसे बड़ी समस्या से इसने पूरी तरह से मुक्ति दिला दी है. जब ब्लूटूथ तकनीक़ से लैस दो उपकरण तीन फीट की दूरी तक संपर्क में आते हैं, तो यह तकनीक़ स्वत: ही संचालित होने लगती है. ब्लूटूथ से लैस उपकरण अपने आप ही अपना नेटवर्क तैयार कर लेते हैं और आप को कुछ करना ही नहीं पड़ता. ब्लूटूथ की खूबियां यहीं ख़त्म नहीं हो जाती है. आमतौर पर तरंगों की मदद से चलने वाले उपकरण अपनी रेंज में आने वाली और तरंगों से जुड़कर आपकी बातचीत में या आपके किसी ज़रूरी काम में खलल डालते हैं, लेकिन ब्लूटूथ की तकनीक़ आपको देती है इस परेशानी से भी छुटकारा. क्योंकि यह स्प्रेड स्पेक्ट्रम फ्रीक्वेंसी होपिंग पर काम करता है और कम पॉवर के वायरलैस सिग्नल के कारण दूसरी तरंगें इसमें किसी भी प्रकार की रूकावट पैदा नहीं करती है.

इस सुविधा का एक फायदा यह भी है कि कम पॉवर के वायरलैस सिग्नल इस्तेमाल करने की वजह से यह बैटरी की कम खपत का भी लाभ देता है. यह तो हुई ब्लूटूथ की उन खूबियों की बात जिन्हें आप कहीं न कहीं पढ़ या सुन चुके हैं, पर अब जीएन कंपनी लेकर आई है ब्लूटूथ हैंडसेट एलसीडी स्क्रीन के साथ, जिसे उपकरण के बीच में लगाया गया है. इससे आपको अपनी बैटरी को कब चार्ज़ करना है और कॉल कनेक्शन की जानकारी बस पलक झपकते ही मिल जाएगी.

जाबरा फैमिली का नया जाबरा बीटी 41 ब्लूटूथ हैंडसेट अब हाज़िर है. जो ई-टेकनोलॉजी के साथ देता है साफ आवाज़ की गारंटी. इसे काफी आसानी और जल्दी से दूसरे उपकरण के साथ जोड़ा जा सकता है. इसके कारण आप कहीं भी अपने दोस्तों के साथ चैट कर सकते हैं. इसे कान के साथ हुक की मदद से या फिर बिना उसके भी इस्तेमाल किया जा सकता है. यानी जो लोग तेज़ ज़िंदगी जीने के शौकीन हैं, उनके लिए यह किसी वरदान से कम नहीं है. यह ब्लूटूथ छह घंटे का टॉकटाइम या 10 घंटे का स्टैंडबाई मोड पर रखने की सुविधा भी देता है. इसका साइज़ भी बेहद छोटा यानी 412 मिमी और वजन केवल 10 ग्राम है.

क्या आपके घर में भी है डॉक्टर

हम बीमार होने पर डॉक्टर से इलाज़ कराते हैं और अगर कम्प्यूटर बीमार पड़ जाए तो इंजीनियर को बुलाते हैं. और, यदि सीडी बीमार पड़ जाए तो हम किसे बुलाएंग? सीडी पर पड़ा एक भी निशान उसे क्षण भर में ही बेकार बना देता है. पर अब परेशान होने की ज़रूरत नहीं है. इसलिए कि मार्केट में स्किप डॉक्टर आ गया है. स्किप डॉक्टर सीडी का ऐसा डॉक्टर है, जिसकी मदद से आप किसी भी ख़राब सीडी या डीवीडी की मरम्मत आसानी से कर सकते हैं. स्किप डॉक्टर की विशेषता यह है कि वह सीडी में सुरक्षित डाटा को बिना कोई क्षति पहुंचाए ही उसकी ऊपरी सतह की मरम्मत कर देता है.

इस स्किप डॉक्टर को इस्तेमाल करना भी बेहद आसान है. सीडी पर रीसरफेसिंग फ्लुइड लगाएं और उसे स्किप डॉक्टर के जॉ में लगा दें. फिर हैडंल को तब तक घुमाएं जब तक सीडी एक पूरा चक्कर ना ले ले. अंत में सीडी को निकालकर सुखा लें. बस फिर क्या, आपकी सीडी पुन: इस्तेमाल के लिए तैयार है.

यह डिवाइस सीडी, सीडी-आर, सीआर-आरडब्लू, डीवीडी, डीवीडी + आर, डीवीडी + आरडब्लू, डीवीडी-आर, डीवीडी-आरडब्लू, डीवीडी-रैम, निनटेन्डो गेमक्यूब, प्लेस्टेशन 1 और 2, एक्स बॉक्स और अन्य गेम डिस्क के साथ कंपेटिबल है.

स्किप डॉक्टर के साथ पैकेज में आपको मेन अडेप्टर, रीसरफेसिंग फ्लुइड, डाइंग फ्लुइड और फेल्ट बफिंग भी मिलता है. मार्केट में इस पैकेज क़ीमत तकरीबन एक हज़ार रुपये है.

ग्रेस डिज़िटल ऑडियो का एक्वा साउंडर

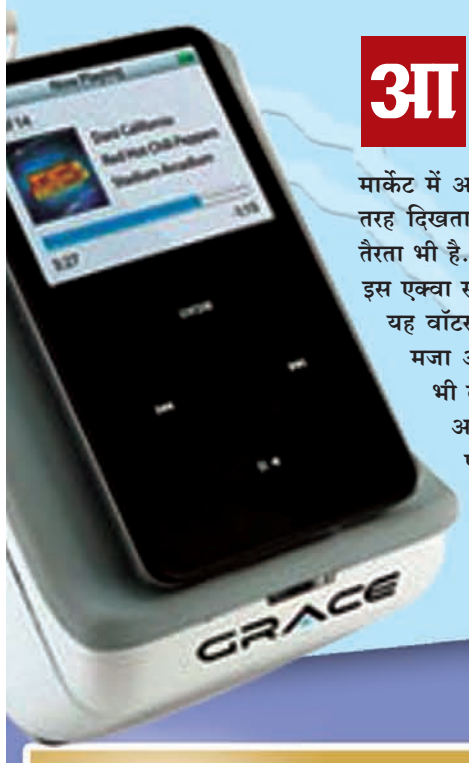

आपने बीच पर खेलते हुए बीच बॉल को तो अवश्य देखा होगा. पर क्या कभी बीच बॉल से गाने सुने हैं? जी हां, बीच बॉल जैसा दिखने वाला स्पीकर मार्केट में आ गया है. यह स्पीकर बीच बॉल की तरह दिखता ही नहीं बल्कि उसकी तरह पानी में तैरता भी है.

इस एक्वा साउंडर की सबसे खास बात यह है कि यह वॉटरप्रूफ है, यानी इसके जरिए संगीत का मजा अब आप अपने पूल और बाथ टब में भी ले सकते हैं. यह स्पीकर सीधा आपके आई पॉड से कनेक्ट हो जाता है. आई पॉड पर लगे ट्रांसमीटर के चलते आप आवाज़ आई पॉड से सीधे स्पीकर में सुन सकते हैं. आई पॉड में लगा ट्रांसमीटर अधिकतर ऑडियो सोर्स के साथ काम करता है और एक बार में 10 से अधिक स्पीकर पर भी काम कर सकता है. तो अब आप घर के किसी भी कोने से संगीत सुन सकते हैं.कोई भी उत्सव हो, बस आई पॉड को स्पीकर से लगाइए और पसंद के गानों का आनंद उठाइए.

पॉड से इस स्पीकर की रेंज लगभग 150 फीट तक है. स्पीकर में लगी स्पेशल बैटरी इसे 10 घंटे से अधिक चलने की क्षमता प्रदान करती है. साथ ही कई घंटे पानी में रहने पर भी यह बैटरी काम करती ही रहती है. अपने फ्लोटिंग फीचर के साथ ही इसमें दोनों ओर दो अल्ट्रा ब्राइट लेड मून लाइट लगी हुई हैं. यानी आपकी पूल पार्टी को दिन में तो क्या यह रात में भी चार चांद लगा देगा.मार्केट में इस की क़ीमत 1750 रुपये है.

रीयल का कार्ड फोन

मोबाइल फोन के बाज़ार में अब तक का सबसे पतला और छोटा फोन दस्तक देने को तैयार है. इसका साइज़ आपकी ज़ेब में रखे क्रेडिट कार्ड जितना है. हालांकि अब बाज़ार में काफी छोटे फोन उपलब्ध है पर इसे निविर्वाद रूप से कार्ड फोन कहा जा सकता है. इससे भी बड़ी ख़बर यह है कि भारत में मोबाइल फोन के बढ़ते बाज़ार को देखते हुए इसकी निर्माता रियल कार्ड फोन कंपनी ने इसे सबसे पहले भारत में ही लांच करने का मन बनाया है. आमतौर पर फोन का पानी में गिर जाने से ख़राब होना मोबाइल यूजर्स को काफी परेशान करता है, पर इस फोन की ख़ासियत यह है कि पानी में गिरने पर भी काम करना बंद नहीं करता. यह चमत्कारी फोन केवल 5.9 मि.मी पतला है और इसका वजन आपकी उम्मीद से भी कम केवल 37 ग्राम है. इसके अतिरिक्त इसमें एक साथ दो सिम-कार्ड का प्रयोग भी किया जा सकता है. कंपनी ने इसे कलर स्क्रीन और मोनोक्रोम दोनों ही मॉडल में पेश किया है. इस फोन में 460 एमएएच की बैटरी इस्तेमाल की गई है जो इसे 200 मिनट का टॉकटाइम या फिर 100 घंटे का स्टैण्डबाई मोड पर रखने की सुविधा प्रदान करती है. इस फोन में साधारण कीपैड की जगह ऑनस्क्रीन कीपैड हैं. इन सब के अलावा यह फोन आपकी पसंद की भाषा का भी ख्याल रखता है. तो अगर आप भी ऐसे फोन को पाने की चाहत रखते है तो बस कीजिए कुछ दिनों का इंतज़ार, क्योंकि इस फोन की जून-जुलाई में बाज़ार में आने की संभावना है.

दीवार में छिपी हुई तिजोरी

दीवार में छिपी यह तिजोरी बड़े काम की चीज़ है. आमतौर पर चोरों को छह मिनट से भी कम समय लगता है घर में घुसकर आपकी आलमारी की तिजोरी तक पहुंचने में. तिजोरी यानी वह जगह जहां लोग अपनी क़ीमती चीज़ें रखते हैं. लेकिन चोरों से बचने में अब काम आएगी दीवार में छिपी यह तिजोरी. दरअसल यह एक इलेक्ट्रॉनिक सॉकेट की तरह दिखती है, जिससे चोर तो क्या कोई भी इसके झांसे में आसानी से आ जाएगा. दीवार में लगा यह सॉकेट ही असल में आपके पैसे और गहनों को छिपाने की तिजोरी है. इसकी अन्य ख़ासियत है इसका रंग और इसकी बनावट. यह दिखने में बेहद छोटी है, पर इसके अंदर काफी जगह होती है.यह चोरों से अपने पैसों को बचाने के लिए एक कारगार हथियार है. बाजार में इसकी कीमत 7.99 डॉलर है.

नोकिया का नया ई-75 बाज़ार में

नोकिया अब बाज़ार में लेकर आया है ई सीरीज़ का नया मोबाइल फोन ई-75. यह फोन आपको देता है इंटरनेट की पूरी सुविधा. इस हैंडसेट में पहले से ही नोकिया पुश ई-सुविधा उपलब्ध है.यह स्लाइडर फोन नोकिया सीरीज़ का पहला ऐसा फोन है जो ई-मैसेजिंग सर्विस का भरपूर आंनद देता है. यानी अब आप जब चाहें तभी इंटरनेट मैसेजिंग का लाभ उठा सकते हैं. कंपनी का दावा है कि नोकिया ई-75 हर किस्म की इंटरनेट सुविधा आसानी से देने में सक्षम है. इसकी खास बात है इसका स्टेंडर्ड और क्यूरटी की-पैड और साथ ही इसमें लगा ऑटो कम्पलिशन और करैक्शन फीचर, जो इसे आम फोन से जुदा करता है.इस फोन में लगा है 3.2 मैगापिक्सल कैमरा, ऑटो-फोकस, मीडिया प्लेयर, एफएम और इंटरनेट रेडियो. इसकी एक अन्य खूबी है वीपीएन, जिससे इंट्रानेट की सुविधा और भी बेहतर उपलब्ध होती है.

नोकिया ई-75 एमपीथ्री, एएसी, नोकिया पोडकास्ट और विंडोज मीडिया प्लेयर को पूर्णत: सर्पोट करता है. इस फोन में ओवीआई, नोकिया मैप और नोकिया गेम सर्विस एन गेज जैसी सभी सुविधाओं का भी फायदा उठाया जा सकता है. यह फोन सिल्वर ब्लैक और लाल रंग में उपलब्ध है. इस फोन की लुक ही इसे बाजार में आकर्षण का केंन्द्र बनाएगी और यह खासतौर पर उन लोगों को अधिक प्रभावित करेगा जो कि क्लासिक चीजों के शौकीन हैं. इसकी कीमत 26,299 रु पये है.

आईपीएल-2 में किंग ख़ान की बाज़ीगीरी

कहानी पूरी फ़िल्मी लगती है. इसमें एक्शन से लेकर सस्पेंस और ट्रेजडी तक सब है. इसके पात्र भी बड़े मज़ेदार हैं. एक किंग है, तो एक महाराज. नायक इन दोनों में से एक ही है. हमारी फ़िल्मों में नायक के लिए अंत तक सब ठीक हो जाता है. यहां भी अंत नायक की पसंद का ही हुआ. किंग ही रहा किंग, लेकिन महाराज की गद्दी चली गई.

बात शाहरुख खान की कोलकाता नाइट राइडर्स (केकेआर) की है. केकेआर इंडियन प्रीमियर लीग (आईपीएल) की सबसे ग्लैमरस टीम है. इसके मालिक शाहरुख़ के तो क्या कहने. इसके खिलाड़ियों के अंदाज़ भी कम नहीं. इसलिए तो पिछले साल हार कर भी शाहरुख़ की टीम फायदे में रही. किंग ख़ान की एक हिट फ़िल्म का जुमला था-हार कर जीतने वाले को बाज़ीगर कहते हैं. टीम केकेआर भी कुछ ऐसा करते दिख रही थी, लेकिन फ़िल्मी और क्रिकेट की बाज़ीगरी में थोड़ा फर्क पड़ गया. जब आईपीएल का सीक्वल बनने की बारी आई, तो किंग ख़ान को पुरानी हार याद आई. अब बार-बार हार कर बाज़ीगरी तो हो नहीं सकती. सो इस बार जीतने के लिए फार्मूलों की तलाश हुई. बुच्चीबाबू (जॉन बुकानन) ने सुझाया कि टीम के कई कप्तान बना दिए जाएं, किंग को फ़ार्मूला पसंद भी आया, लेकिन महाराज यानी सौरभ गांगुली को यह बात खल गई. उनके प्रशंसकों ने तो बंगाल ही सिर पर उठा लिया. उधर, बेचारे शाहरुख़ थे कि सुनील गावस्कर से भी पंगा ले लिया. फजीहत होने लगी तो कहा, बस सुझाव था. महाराज की कप्तानी बची रही. उनके समर्थकों को लगा मैदान मार लिया. लेकिन पिक्चर तो अभी बाकी थी. तीन घंटे की फिल्मों के बादशाह शाहरुख़ अब तीन घंटे के क्रिकेट यानी ट्वेंटी-20 में भी बादशाह बनना चाहते हैं. पिछली बार उनकी आंखें तब चमक उठीं थीं जब ब्रैंडन मैकुलम ने उन्हें शानदार शुरुआत दिलाई थी. हालांकि बाद में उनका यह सपना अधूरा ही रह गया, लेकिन मैकुलम की ताक़त पर उनका भरोसा तो बन ही गया था. सौरभ गांगुली टीम के सबसे बड़े सितारे थे. शाहरुख़ के रहते केकेआर में कोई दूसरा सितारा रहे, यह उन्हें मंजूर न था. उधर, बुकानन भी सौरभ से नाराज़ थे. सो सौरभ का पत्ता कटना तय था. बस तैयारी बाक़ी थी. जब चार कप्तानों वाला दांव उलटा पड़ गया तो नए खेल की शुरुआत हुई.

दरअसल शाहरुख़ ने यह भांप लिया था कि कोलकाता में गांगुली से पंगा नहीं लिया जा सकता. इसलिए सौरभ को किनारे करने की घोषणा उन्होंने टीम के दक्षिण अफ्रीका पहुंचने पर की. मैकुलम को कोलकाता नाइट राइडर्स की कमान थमा दी गई. उधर, बेचारे गांगुली की समझ में नहीं आ रहा कि वह क्या करें. बेचारे यह समझ नहीं पा रहे कि उनकी क्या गलती है. पिछले आईपीएल में वह टीम के सबसे ज़्यादा रन बनाने वाले बल्लेबाज़ थे. टीम हार गई तो पूरा ठीकरा उनके सिर क्यों फूटे. भारतीय टीम के कप्तान के तौर पर भी उनकी छुट्टी कुछ यूं ही हुई थी. दरअसल गांगुली की कुंडली में कालसर्प योग की तरह कंगारू-योग जा बैठा है. जिस तरह से पहले ग्रेग चैपल और अब बुकानन ने उनका रास्ता काटा है, उससे तो यही लगता है. आस्ट्रेलियाई कोच गांगुली के लिए दुर्भाग्यपूर्ण साबित हुए हैं. गांगुली के दुर्भाग्य की चरम सीमा यह है कि जिस आस्ट्रेलियाई टीम के ख़िलाफ़ उन्होंने भारतीय टीम को मुक़ाबले में ला खड़ा किया उसी के पूर्व कोच ने उन्हें टीम के कप्तान के पद से दूर कर दिया. माना जा रहा है कि बुकानन ने शाहरुख़ ख़ान से जीत के लिए यह शर्त रखी थी कि कप्तान उनकी पसंद का हो. मज़े की बात है कि इसी बुकानन के सारे पैंतरे गांगुली ने 2001 में आस्ट्रेलियाई टीम के भारत दौरे पर बेकार कर दिए थे. वहीं गांगुली उनसे होम पिच पर मात खा गए. बुकानन के साथ अभी किंग ख़ान हैं इसलिए वह गांगुली पर भारी पड़ रहे हैं.

शाहरुख़ किसी भी क़ीमत पर जीतना चाह रहे हैं, इसलिए बुकानन की हर बात मान रहे हैं.

वैसे भी इस आईपीएल में भारतीय कप्तानों को हटाकर विदेशियों को कमान सौंपी जा रही है. लक्ष्मण की जगह गिलक्रिस्ट, द्रविड़ की जगह पीटरसन और अब गांगुली की जगह मैकुलम. शायद यह वार्न के नेतृत्व में राजस्थान रॉयल्स की जीत से प्रभावित हो रहे हैं.

बहरहाल, अब देखना है कि अगर मैकुलम भी जीत नहीं दिला पाए तो क्या होगा? क्या किंग ख़ान तब बुकानन का पत्ता साफ कर देंगे? क्या महाराज की गद्दी वापस होगी? कई सवाल हैं, जिनके जवाब आईपीएल का यह सीक्वल देगा. इसलिए कि असली पिक्चर तो अभी बाकी है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

दुनिया

पाकिस्तान के बहाने एशिया में क्रिकेट को मारने की साज़िश

अंग्रेज़ों की फूट डालो, राज करो वाली रणनीति क्रिकेट में भी आ गई है. इसके जरिए क्रिकेट में एशियाई ताक़त को मिटा देने की गहरी साज़िश रची जा रही है. दुर्भाग्य से अन्य कारणों से भारत-पाकिस्तान के राजनीतिक संबंधों में आई गिरावट इसे रोक पाने में नाकाम हो रही है. इसका लाभ उठाते हुए अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट काउंसिल (आईसीसी) ने 2011 में होने वाले विश्व कप की मेजबानी से पाकिस्तान को वंचित कर दिया है. उसने सुरक्षा कारणों से पाकिस्तान में विश्व कप कराने से इंकार कर दिया है. गौरतलब है कि 2011 के विश्व कप की मेज़बानी चार एशियाई देशों-भारत, पाकिस्तान, श्रीलंका और बांग्लादेश-को करनी थी. अब पाकिस्तान में होने वाले 16 मैच बाक़ी तीन एशियाई देशों में कराए जाएंगे. इससे नाराज़ पाकिस्तान ने विश्व कप के बायकाट की ही धमकी दे दी है. अगर ऐसा हुआ, तो एशिया में क्रिकेट का अंत शुरू हो जाएगा.

पाकिस्तान के लिए विश्व कप मैचों की मेज़बानी छिनना गहरा झटका है. इसलिए कि आतंकी हमलों की वजह से वह पहले से ही अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट का वनवास झेल रहा है. अधिकतर टीमें पाकिस्तान में खेलने से कतरा रही हैं. ऊपर से श्रीलंकाई टीम पर हुए हमले ने सुरक्षा की चिंता को और बढ़ा दिया है. ग़ौरतलब है कि सुरक्षा कारणों से ही पाकिस्तान से आईसीसी चैंपियंस ट्रॉफी की मेज़बानी छीन ली गई थी. पिछले दिनों दुबई में हुई बैठक के बाद आईसीसी के अध्यक्ष डेविड मोर्गन ने कहा कि यह दुर्भाग्यपूर्ण फैसला खिलाड़ियों की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए लेना पड़ा. पिछले महीने लाहौर में श्रीलंकाई क्रिकेटरों पर हुए आतंकी हमले के बाद आस्ट्रेलिया और इंग्लैंड के खिलाड़ी भयभीत हैं. सवाल उठता है कि जब ब्रिटेन में आतंकी हमला हुआ था, तो क्या उसके बाद वहां विंबलडन का आयोजन बंद कर दिया गया? इंग्लिश प्रीमियर लीग में तनाव से भरे फुटबॉल मैच धड़ल्ले से हो रहे हैं. इतना ही नहीं, जब आयरिश रिपब्लिकन आर्मी (आईआरए) वाले ब्रिटेन में आए दिन आतंकी हमले कर रहे थे तब भी हर तरह के मैच खेले जाते थे. म्यूनिख ओलंपिक पर आतंकी हमले के बावजूद ओलंपिक खेल बदस्तूर जारी हैं. सिर्फ इसलिए कि आतंकियों को उनके खेल में सफल न होने दिया जाए. दुर्भाग्य से, आईसीसी ने ख़ुद इस खेल भावना को आहत कर दिया. एशियाई क्रिकेट के लिए निश्चय ही यह आतंकी हमले से भी अधिक घातक साबित होगा. आईसीसी के इस एक फैसले से पाकिस्तान को आर्थिक रूप से भी भारी नुकसान उठाना पड़ेगा. हालांकि मोर्गन ने यह आश्वासन दिया है कि आईसीसी उसकी क्षतिपूर्ति करने की कोशिश करेगी. आर्थिक नुकसान की तो भरपाई हो जाएगी, लेकिन आहत खेल भावना को मरहम कैसे लग सकेगा? आईसीसी के इस फैसले के कारण क्रिकेट बिरादरी में पाकिस्तान अलग-थलग पड़ जाएगा. कभी ऐसी ही साज़िश श्रीलंका के ख़िलाफ़ भी रची गई थी. सौभाग्य से भारत और पाकिस्तान दोनों ने ही इसे समय रहते भांप लिया और कोलंबो में खेलने के लिए एक संयुक्त टीम भेज दी. तब भी विश्व कप का ही मामला था. लेकिन इस बार भारत-पाक खुद एक अलग मोर्चे पर आमने-सामने हैं. आगामी खतरे को भांपते हुए भी भारत आज श्रीलंका की तरह पाकिस्तान की मदद नहीं कर पा रहा. एक-एक बार विश्व कप जीतने वाले तीनों एशियाई देश अंतरराष्ट्रीय साज़िश को समझते हुए भी हालात के आगे विवश हैं. ये जानते हैं कि आज जिस तरह आतंकी हमले की आड़ में पाकिस्तान को अलग-थलग कर दिया गया है, कल उसी तरह का खेल ख़ुद उनके साथ भी खेला जा सकता है. याद कीजिए, पिछले साल का आईपीएल. जयपुर में एक मैच की पूर्व संध्या में आतंकियों ने विस्फोट कर 50 से अधिक लोगों की जान ले ली थी. पूरे जयपुर का माहौल बहुत तनावपूर्ण था. तब शेन वार्न की अगुआई में राजस्थान रॉयल्स टीम में कई आस्ट्रेलियाई क्रिकेटर खेल रहे थे. सबने यह कहते हुए मैच खेला कि आतंकियों के मंसूबे पूरे नहीं होने दिए जाएंगे. और, उस एक मैच से शहर में कायम तनाव ख़त्म हो गया था. इसलिए पाकिस्तान को भी दूसरा मौक़ा अवश्य मिलना चाहिए था.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

हॉकी में स्वर्णिम युग की वापसी के संकेत

हॉकी प्रेमियों के लिए खुशख़बरी. वे अब अपनी टीम पर विश्वास कर सकते हैं. भारतीय हॉकी से गिल युग का ख़ात्मा वाकई गुल खिला रहा है. टीम टूर्नामेंट दर टूर्नामेंट अपने प्रदर्शन में ज़बरदस्त सुधार दिखा रही है. हालांकि खिलाड़ी वे ही हैं, पर उनका कौशल बदल गया है. नतीजा सामने है-13 साल बाद अजलान शाह कप भारत ने जीत लिया. वह भी मेज़बान टीम मलेशिया को हराकर. साल भर पहले तक संदीप सिंह में कप्तानी वाले गुण शायद ही किसी को नज़र आया हो. आज कप्तानी में उनका कोई विकल्प नहीं दिखता. क्रिकेट टीम के कप्तान महेंद्र सिंह धोनी की तरह. दुनिया में सबसे अधिक मैच खेलने वाले डिफेंडर दिलीप टर्की आज भी हॉकी में राहुल द्रविड़की तरह मज़बूत दीवार बने हुए हैं. निश्चय ही, इसका श्रेय भारतीय ओलंपिक संघ के अध्यक्ष सुरेश कलमाडी और पूर्व हॉकी कप्तान अजीत पाल सिंह की अध्यक्षता वाली चयन समिति की पारदर्शी चयन नीति को जाता है, जिसने कोच हरेंदर सिंह को काम करने की पूरी आज़ादी दी. साथ ही दिया धनराज पिल्लै जैसा सहयोगी, जिसकी हर सांस में सिर्फ और सिर्फ जीत का जज़्बा है. यह वही टीम है, जिसके बीजिंग ओलंपिक के लिए क्वालीफाई न कर पाने की फज़ीहत हॉकी प्रेमी शायद ही कभी भूल पाएं. यह वही टीम है, जिसके प्रदर्शन को देखकर राष्ट्रीय खेल के मर जाने की घोषणा कर दी गई थी. और हां, यह वही टीम है, जिसे दबाव में बिखर जाने की कमी पर काबू पा लिया है. वह अब नहीं घबराती. तब भी नहीं घबराई, जब अजलान शाह टूर्नामेंट के शुरू में ही मिस्र ने अंतिम समय में गोल कर भारत को बराबरी पर रोक दिया था. वैसे भारत ने चौथी बार अजलान शाह हॉकी प्रतियोगिता जीती है. इससे पहले भारत 1985, 1991 और 1995 में विजेता रहा था. इसके अलावा भारत 2006 और 2008 में इस प्रतियोगिता के फाइनल में पहुंचने में सफल रहा था. इस बार फाइनल में भारत ने घरेलू दर्शकों के भारी समर्थन के बीच खेल रही मलेशियाई टीम के विरुद्ध शानदार प्रदर्शन किया और 3-1 से उसे हरा दिया. भारत के लिए असल चुनौती अब है. सबसे पहले उसे अपने प्रदर्शन में निरंतरता दिखानी होगी. और, नौ मई से शुरू हो रहे एशिया कप में एक बार फिर दिखाना होगा अपना दमखम. एशिया कप की चुनौती अजलान शाह से ज़्यादा कठिन होगी. इसलिए कि इसमें एशिया की कई धुरंधर टीमें न सिर्फ भाग लेंगी, बल्कि मलेशिया और पाकिस्तान जैसी टीम अजलान शाह कप में हुई हार का बदला लेने की कोशिश भी करेंगी. इसके अलावा दक्षिण कोरिया, चीन और जापान की टीमों के खिलाफ भी मैच कठिन हो सकता है. ग़ौरतलब है कि भारत ने 2003 में पाकिस्तान को 4-2 और 2007 में कोरिया को 7-2 से शिकस्त देकर एशिया कप खिताब अपने नाम किया था. इसमें कोई दो राय नहीं कि टीम में अब भी कई कमियां हैं. इन्हें जल्दी से जल्दी दूर करने की ज़रूरत है. वैसे कोच हरेंदर सिंह को अपनी क्षमता पर भरोसा है. लगता है कि उन्हें टीम की कमियां भी समझ में आ गई हैं और वह टीम को पटरी पर लाने के प्रयास में लगे हुए हैं. निश्चय ही अजलान शाह कप हॉकी टूर्नामेंट जीतना भारतीय हॉकी टीम के स्वर्णिम युग की तरफ वापसी की ओर पहला कदम है. लेकिन टीम को इस दिशा में सफर पूरा करने में अभी और कड़ी मेहनत करनी होगी.

भारतीय हॉकी से गिल युग का ख़ात्मा वाकई गुल खिला रहा है. टीम टूर्नामेंट दर टूर्नामेंट अपने प्रदर्शन में ज़बरदस्त सुधार दिखा रही है. हालांकि खिलाड़ी वे ही हैं, पर उनका कौशल बदल गया है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

बॉलीवुड को मिले नए फैन

भारत के साथ तिब्बत का रिश्ता भावुकता की हद तक गुंथा हुआ है. अब इस रिश्ते को बॉलीवुड ने भी मज़बूती दे दी है. तिब्बत में बॉलीवुड का जादू सिर चढ़ कर बोल रहा है. तिब्बती युवाओं में बॉलीवुड की हिंदी फ़िल्मों के गाने और संगीत, बॉलीवुड के सितारे बेहद लोकप्रिय हो रहे हैं. शाहरुख़ ख़ान और ऐश्वर्या के नाम युवाओं की ज़ुबान पर अक्सर रहते हैं. तिब्बती युवाओं की नई पीढ़ी जींस पहनना, कोक पीना और डिस्को में जाना खूब पसंद करती है. इस पीढ़ी को बॉलीवुड का बिंदास अंदाज़ बहुत भा रहा है. उनके बीच बॉलीवुड के गाने–जैसे पप्पू कांट डांस साला, इट्स टाइम टू डिस्को–काफी लोकप्रिय हैं. भाषा समझ में न भी आए तो क्या, वहां के युवाओं को हिंदी गानों की लय, धुन और ताल पर झूमना बहुत अच्छा लगता है.

बॉलीवुड का संगीत और फ़िल्म स्टार ही नहीं बल्कि तिब्बती युवतियों और महिलाओं में सलवार कमीज़ भी काफी लोकप्रिय है. अधिक संख्या में तिब्बती महिलाओं के पास साड़ी नहीं है लेकिन उनकी ख्वाहिश है कि उनके पास भी एक साड़ी हो. तिब्बत के बाज़ारों में बॉलीवुड सी.डी. और डी.वी.डी आसानी से मिल जाती है. शाहरुख़ ख़ान, ऐश्वर्या और प्रीति ज़िंटा के पोस्टर लोगों के घरों, दुकानों और शहर में कई ज़गहों पर आसानी से देखे जा सकते है. इन सितारों के पहनावे और अंदाज़ को तिब्बती युवा अपना रहे है. ऐश्वर्या राय वहां लोकप्रियता के मामले में सबसे आगे है. पूर्व विश्वसुंदरी के पहनावे और अभिनय की तिब्बती लोगों में धूम है, हालांकि वहां बहुत कम लोगों को हिन्दी आती है फिर भी कोई बॉलीवुड की फिल्में देखने का मौका नहीं छोड़ता.

बॉलीवुड का नया हिट फार्मूला- सीक्वल

बॉलीवुड में कुछ फ़िल्मों की कहानियां मरकर भी नही मरतीं, ये कहानियां दर्शकों के दिलों पर ऐसी अमिट छाप छोड़ जाती हैं जो वक्त के साथ धुंधली होने के बजाए और गहरी होती जाती है.

हॉलीवुड की तो छोड़िए अब अपना बॉलीवुड भी हर हिट किरदार को दोबारा भुनाना चाहता है. फ़िल्म इंडस्ट्री में ऐसी कहानियों के किरदारों को भुनाने का दौर चल पड़ा है. सीक्वल फिल्मों के दमदार क़िरदारों का मोह डायरेक्टर छोड़ नहीं पाते हैं, क्योंकि सीक्वल फ़िल्मों के निर्माण से निर्माता–निर्देशकों को मोटा मुनाफा होता है. इसलिए आज यशराज फिल्म्स, राकेश रोशन और विधु–चोपड़ा जैसे बड़े बैनर भी सीक्वल पर अंधाधुंध पैसा लगाने से पीछे नहीं हट रहे है. ग़ौर करने वाली बात यह है कि सीक्वल बनाते वक्त फ़िल्मकार को ज़्यादा तैयारी करने की ज़रूरत पड़ती है, क्योंकि पहली फ़िल्म की सफलता के कारण दर्शकों की उम्मीदें आने वाली दूसरी फ़िल्म से अधिक बढ़ जाती हैं. निर्माता निर्देशक पर दबाब होता है कि वे पिछली फ़िल्म से बेहतर फ़िल्म बनाएं, क्योंकि लोग सीक्वल फ़िल्म की

सीक्वल फिल्में बनाने का उत्साह आज फिल्मकारों में इस कदर बढ़ चुका है कि निर्माता–निर्देशक गोल्डी बहल अपनी महा फ्लॉप फिल्म द्रोणा का सीक्वल बनाने से बाज नहीं आ रहे हैं.

तुलना पुरानी हिट फ़िल्म से करते है. जबर्दस्त कॉमेडी फ़िल्म हेराफेरी की सीक्वल, फिर हेरा फेरी भी जबर्दस्त हिट रही थी. मुन्नाभाई एमबीबीएस के हिट होने के बाद लगे रहो मुन्ना भाई, एक्शन फिल्मों में धूम के बाद धूम–2 और सुपरनेचुरल पावर पर बनी कोई मिल गया की सीक्वल कृष हिट फ़िल्मों में शुमार की जाती है. सुनने में आ रहा है कि घायल, नो एंट्री और रंग दे बसंती जैसी फ़िल्मों के सीक्वल की भी तैयारी चल रही है.सीक्वल के इसी दौर में निर्देशक पूजा भट्ट भी अब ज़िस्म का सीक्वल बनाने जा रही हैं. यह सिर्फ एक सीक्वल नहीं होगा बल्कि इस कड़ी में जिस्म–2 के बाद जिस्म–3 और जिस्म–4 भी बनाई जाएगी. पर इसमें जॉन और बिपाशा की सेक्सी जोड़ी की ज़गह दूसरे हीरो–हीरोइन काम करेंगे. इससे पहले भी भट्ट कैंप अपनी सुपरहिट फ़िल्म राज़ का सीक्वल राज़–द मिस्ट्री बना चुका है. आज निर्माता इन फ़िल्मों की क़ामयाबी को लेकर इतने आश्वस्त है कि अमिताभ और रितेश देशमुख की आने वाली फ़िल्म अलादीन के सीक्वल की घोषणा फ़िल्म की रिलीज़ से पहले ही की जा चुकी है. साल 2008 की हिट फ़िल्म रेस का सीक्वल अब्बास मस्तान बनाने की सोच रहे हैं. लेकिन इस बार कैटरीना और बिपाशा की जगह करीना कपूर होंगी.

जहां एक तरफ राष्ट्रीय पुरस्कार विजेता फ़िल्म खोसला का घोंसला के सीक्वल की तैयारी चल रही है, वहीं दूसरी ओर हिमेश ला रहे है अपनी फिल्म आपका सुरूर का सीक्वल–आपका सुरूर–2. इसी तरह पार्टनर, डॉन और सिंह इज़ किंग जैसी फिल्मों के भी भविष्य में सीक्वल दिखाई दे सकते है. भेजा फ्राई के सीक्वल को लेकर भी लोगों की ऐसी ही उम्मीद है. फ़िल्म के सीक्वल को लेकर अभी से ही चर्चा होने लगी है. करण जौहर भी अपनी फिल्म दोस्ताना का सीक्वल बनाने की सोच रहे हैं. यदि ऐसा हुआ तो एक बार फिर पर्दे पर अभिषेक बच्चन और जॉन अब्राहम को पात्रों की भूमिका करते देखने को मिलेंगे.

आजकल सीक्वल के बढ़ते चलन को देखकर बरसों पुरानी फ़िल्मों को भी इस कड़ी में शामिल किया जा रहा है. जहां करण–अर्जुन के सीक्वल में शाहरुख़–सलमान–अपना जलवा बिखेरते हुए दिखाई देगें, वहीं हम आपके हैं कौन के सीक्वल में भी सलमान होंगे.

बहरहाल, सीक्वल फिल्में बनाने का उत्साह आज फिल्मकारों में इस कदर बढ़ चुका है कि निर्माता–निर्देशक गोल्डी बहल अपनी महा फ्लॉप फिल्म द्रोणा का सीक्वल बनाने से बाज़ नहीं आ रहे है. तो अब आप चाहे इसे निर्माता–निर्देशकों का पैसों से मोह कहें या सीक्वल फ़िल्मों की कामयाबी का नशा, सच तो यही है कि जब तक सीक्वल फ़िल्में बाज़ार में आती रहेंगी तब तक दर्शकों को ज़रूर अपनी पसंदीदा फ़िल्मों के क़िरदारों को एक बार फिर से देखने का मौका मिलता रहेगा.

अनुपम खेर की समाजसेवा

अनुपम खेर इन दिनों ग़ैरफ़िल्मी कामों को भी प्राथमिकता दे रहे हैं. वह इन दिनों निर्वासित कश्मीरी हिंदुओं को उनके अधिकार और सम्मान वापस दिलवाने की मुहिम में सक्रिय हैं. इस सिलसिले में खेर ने विस्थापित कश्मीरियों के एक सम्मेलन में भी हिस्सा लिया. वहां उन्होंने कहा कि वह लोगों का ध्यान उन कश्मीरी पंडितों की तरफ आकर्षित करना चाहते हैं, जिन्हें आतंकवाद के चलते 1990 में कश्मीर घाटी छोड़नी पड़ी थी.

खेर ने कहा, मैं भी कश्मीरी पंडित हूं. मेरे मित्रों और रिश्तेदारों ने भी इस दर्द को सहा है. इसलिए इस समुदाय के प्रति मेरा कर्तव्य बनता है कि मैं इन लोगों को सम्मान और गरिमा के साथ घाटी में उनकी पुरानी जगह वापस दिलाने की कोशिश करूं.

उन्होंने कहा कि कश्मीरी पंडितों के लिए जम्मू–कश्मीर सरकार सिर्फ वादे कर रही है. एक भी वादे पर अमल नहीं होता. उनके मुताबिक, इस मसले का हल सशक्तीकरण के जरिए ही हासिल हो सकता है. बदलाव और सशक्तीकरण तभी संभव है, जब सत्ता में उनकी भी भागीदारी हो. इसके साथ–साथ उन्होंने यह भी साफ कर दिया कि वह राजनीति में शामिल होने नहीं जा रहे हैं. लेकिन समुदाय के लिए काम करते रहेंगे.

लीक से हटकर रखे जा रहे हैं फिल्मों के नाम

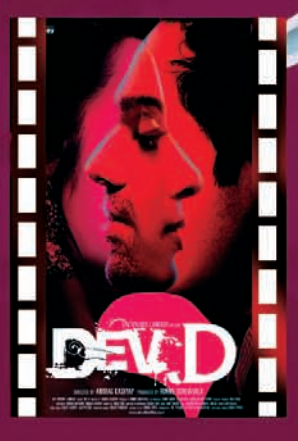

करण जौहर की चाहे वेकअप सिड हो या फरहान अख्तर की कार्तिक कालिंग कार्तिक, बॉलीवुड में इस तरह के अजीबो–गरीब नामों का प्रचलन तेजी से बढ़ रहा है. इसके पीछे मक़सद वही पुराना है. यानी दर्शकों को लुभाना. इसके लिए कभी अंकों का इस्तेमाल होता है तो कभी अंग्रेज़ी का.

फरहान के मुताबिक कार्तिक कालिंग कार्तिक के शीर्षक से ऐसा लगता है जैसे कहानी किसी साज़िश के इर्द–गिर्द घूमेगी. ज़ाहिर है, ये सब जनता या दर्शकों की जिज्ञासा को बढ़ाने के लिए ही किया जाता है. अब यह देखना बाकी है कि फ़ार्मूला किस हद तक सफल होता है.

अजीबो–गरीब शीर्षकों वाली फ़िल्मों की इस सूची में राजकुमार संतोषी की आने वाली फ़िल्म–अजब प्रेम की गजब कहानी, रजत कपूर की–रेक्टेंगुलर लव स्टोरी, श्याम बेनेगल की–अबा का कुआं, दीप्ति नवल की–दो पैसे की धूप, चार आने की बारिश, संजय दत्त की–चतुर सिंह टू स्टार और विशाल भारद्वाज की–कमीने–शामिल हैं.

जब कोई निर्माता–निर्देशक फ़िल्म के बारे में सोचता है तो उसका सबसे पहला उद्देश्य ऐसे शीर्षक का चुनाव करना होता है जिसे सुनकर दर्शकों में जिज्ञासा जगे. यकीनन फ़िल्म का शीर्षक और कहानी एक–दूसरे से मेल खाते होने चाहिए.

पिछले कुछ समय में जिन फिल्मों के शीर्षकों ने बॉलीवुड में अलग पहचान बनाई है, उनमें टैक्सी नं.–9211, मनोरमा सिक्स फीट अंडर, हनीमून ट्रेवल्स प्राइवेट लिमिटेड और देव डी विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं. इन सभी फ़िल्मों ने बॉक्स ऑफिस पर अच्छी कमाई की है.

फ़िल्म समीक्षक सैबल चटर्जी का कहना है कि यूं तो हम काफी लंबे समय से फ़िल्में बना रहे हैं, पर शीर्षकों में कुछ नया देखने को आज ही मिल रहा है. हर फ़िल्म निर्माता चाहता है कि उसकी फ़िल्म का शीर्षक आकर्षक हो. इतना धांसू कि दर्शकों का ध्यान फौरन ही फ़िल्म की ओर खींचा जा सके. यह सही है कि एक आम दर्शक भी देखने से पहले ही शीर्षक के आधार पर फ़िल्म की कहानी का अंदाज़ा लगा लेता है. आज का दर्शक आमतौर पर ज़्यादा युवा है, इसलिए फ़िल्म का शीर्षक भी युवाओं को ध्यान में रखकर ही बनाया जाता है. हालांकि फ़िल्मों को अजीबो–गरीब नाम देने की यह परंपरा नई नहीं है. पहले भी कुछ अलग तरह के शीर्षकों के साथ फ़िल्में बनतीं और चलती रही हैं. इनमें औरत (1940), आवारा अब्दुल्ला (1963), बढ़ती का नाम दाढ़ी (1974) और अल्बर्ट पिंटो को गुस्सा क्यों आता है (1980) शामिल हैं.

ओमर कुरेशी कहते हैं कि आज का युवा हिंगलिंश बोलता है. यही कारण है कि आजकल शीर्षकों में ज़्यादातर हिंगलिंश का ही उपयोग किया जा रहा है. कुछ अलग तरह के शीर्षकों के साथ आने वाली फ़िल्मों में लव खिचड़ी, दीवाना मस्ट डाइ, टूनपर का सुपर हीरो शामिल हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com